त्रैमासिक पत्रिका

हमार गाँव

अक्टूबर – दिसम्बर, 2017, वर्ष 16 : अंक 67

आई0एस0एस0एन0 नं0 0972–7825

इस अंक में

प्रधान संरक्षक

डॉ० राजेन्द्र बी० लाल

कुलपति,

सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वसिद्यालय

इलाहाबाद – 211 007

❖❖❖

संरक्षक

प्रो० (डॉ०) एस० बी० लाल, प्रति कुलपति
प्रो० (डॉ०) जोनाथन ए० लाल, निदेशक (आई०पी०सी०)
प्रो० (डॉ०) विल्सन किस्पोटा, निदेशक (प्रसार)
प्रो० (डॉ०) शैलेश मारकर, निदेशक (शोध)

❖❖❖

सलाहकार मंडल

प्रो० (डॉ०) जोनाथन ए० लाल, निदेशक (आई०पी०सी०), प्रो० डॉ० आरिफ ए० ब्राडवे, प्रो० डॉ० डी० बी० सिंह, प्रो० डॉ० प्रमिला गुप्ता, प्रो० डॉ० पी० डब्ल्यू० रामटेके, प्रो० डॉ० वी० एम० प्रसाद

❖❖❖

प्रभागाध्यक्ष एवं मुख्य संपादक

(ई.आर.) सी. जे. वेसली

❖❖❖

डिजाइन एवं ले आऊट

दीप्ति लाल

Ø0l0	fo"k;	i"B l0
1.	माननीय कुलपति जी का संदेश	– 03
2.	गन्ने का प्रसंस्करण	– 05
3.	लोबिया की उन्नत खेती	– 06
4.	अंगूर की उन्नत खेती	– 09
5.	सौंफ उत्पादन की उन्नत तकनीक	– 13
6.	चौलाई की अगेती खेती से किसान भाई प्राप्त करें अधिक मुनाफा	– 14
7.	डहेलिया की खेती	– 17
8.	मूँगफली का दूध आधारित फरमेंटेड दही	– 20
9.	बॉकला एवं पंखिया सेम की उन्नत खेती	– 22
10.	प्याज का बीजोत्पादन कैसे करें	– 26
11.	आज की आवश्यकताः सब्जी बगीचा	– 30
12.	सदस्यता फार्म	

लेख, सदस्यता एवं विज्ञापन हेतु निम्न पते पर लिखें या सम्पर्क करें –

विश्वविद्यालय प्रकाशन प्रभाग

सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय

इलाहाबाद – **211 007**

फोन :– **(0532) 2684278, 2684284, 2684290**

वार्षिक व्यक्तिगत सदस्यता शुल्क रू०. **200/–** । संस्था सदस्यता शुल्क **350/–** (डाक खर्च अतिरिक्त)

पत्रिका में प्रकाशित समस्त लेख व रचनाओं से प्रकाशक एवं सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। ये लेखकों के निजी विचार और सुझाव हैं।

एगीज़

शुद्ध, स्वच्छ, रोगाणु रहित, उच्च वैज्ञानिक विधि द्वारा उपचारित

स्टैन्डर्ड दूध
टोन्ड दूध
डबल टोन्ड दूध
सुगन्धित दूध
टेबिल बटर
कुकिंग बटर
पनीर
दही
खोआ
देशी घी
विभिन्न प्रकार की आइसक्रीम

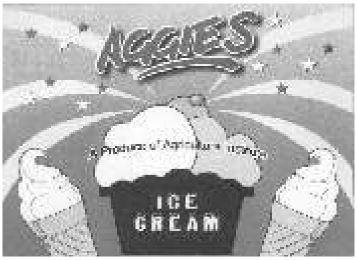

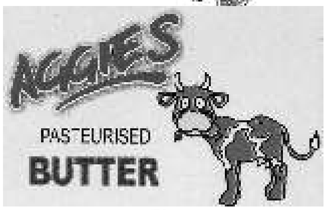

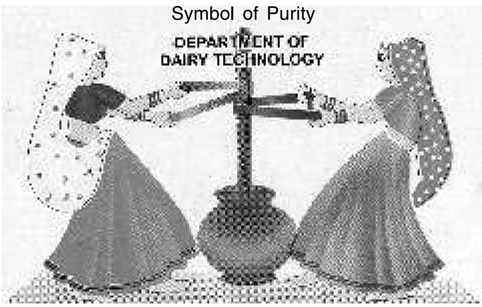

डेयरी अधीक्षक

स्टूडेन्ट्स ट्रेनिंग डेयरी

सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय

इलाहाबाद - २११ ००७ (उ०प्र०) फोन - २६८४६०१

शादी एवं पार्टियों के शुभ अवसर पर सप्लाई की विशेष सुविधा उपलब्ध।

सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय

Sam Higginbottom University of Agriculture, Technology And Sciences

(U.P. State Act No. 35 of 2016, as passed by the Uttar Pradesh Legislature)

Allahabad - 211 007 U.P. India

मोस्ट. रेव्ह (प्रोफे0 डा0) राजेन्द्र बी0 लाल, कुलपति
Most. Rev. (Prof. Dr.) Rajendra B. Lal, Vice-Chancellor
Ph.D.Soil Science (Kansas State University, U.S.A.)
Ph.D.Ag. Botany (Kanpur)
PDF Envion. Chem (K.S.U., USA)
FISAC, Gamma Sigma Delta Scholar.

Office : 0532-2684284
Res. : 0532-2684587
Fax : 0532-2684593
E-Mail : vicechancellor@shiats.edu.in

माननीय कुलपति का संदेश

भारत में पहले खेती केवल जीविकोपार्जन के लिए की जाती थी लेकिन धीरे धीरे खेती ने व्यवसाय का रूप ले लिया है। किसान अधिक उपज प्राप्त करने के लिए अंधाधुंध रासायनिक उर्वरक, कीटनाशकों का प्रयोग कर रहा है जिससे मृदा के साथ साथ पर्यावरण पर भी हानिकारक प्रभाव हो रहा है फसल अवशेष को जलाना भी एक पर्यावरण तथा मृदा प्रदूषण का महत्वपूर्ण कारण है।

पिछले कुछ वर्षो में एक समस्या मुख्य रूप से देखी जा रही है कि जहां हार्वेस्टर के द्वारा फसलों की कटाई की जाती है उन क्षेत्रों में खेतों में फसल के तने के अधिकतर भाग खेत में खड़े रह जाते है तथा वहां के किसान खेत में फसल के अवशेषों को आग लगाकर जला देते है।

आधुनिक समय में बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण खाद्यान पूर्ति हेतु किसान रासायनिकां जैसे- खाद, खरपतवारनाशी, रोगनाशी तथा कीटनाशकों को प्रयोग कर रहे है। सम्भवतः इनके प्रयोग से किसान प्रथम वर्ष अधिक उत्पादन तो प्राप्त कर लेते है, परन्तु धीरे धीरे इनके प्रयोग से मृदा की उर्वरा शक्ति क्षीण होने लगती है और फसलों की उत्पादन क्षमता भी कम हो जाती है। इन रसायनों से पर्यावरण में भी विपरीत प्रभाव पड़ता है।

इतिहास में एक समय ऐसा भी रहा है जब याचक के पानी मांगने पर उसे मिश्री-मिश्रित दूध दिया जाता था। तब देश में दूध और घी की नदियां बह रही थी। हमारे अपने देखे काल में ही किसी के पानी मांगने पर उसे पहले गुड़ की डली भेंट की जाती थी और बाद में पानी। हमारा कोई पर्व या उत्सव ऐसा नहीं

होता जिस पर हम अपने बंधु-बांधवों और इष्ट-मित्रों का मुंह मीठा नहीं करते। सच तो यह है कि मीठे की सबसे अधिक खपत हमारे देश में ही है। गन्ना एक प्रमुख फसल है जिससे चीनी, गुड़ आदि का निर्माण होता है।

भारतीय किसान खेती व्यवसाय के रूप में नहीं करता है, बल्कि जीविकोपार्जन के लिये करता है। लोबिया एक पौधा है। जिसकी फलियां पतली, लम्बी होती है। इनकी सब्जी बनती है। इस पौधे को हरी खाद बनाने के लिए भी प्रयोग में लाया जाता है। अंगूर संसार के उपोष्ण कटिबंध के फलों में विशेष महत्व रखता है हमारे देश में लगभग ६२० ई. पूर्व ही उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में अंगूर की व्यवसायिक खेती एक लाभकारी उद्यम के रूप में विकसित हो गई थी। सब्जी बगीचा में सब्जी उत्पादन का प्रचलन प्राचीन काल से चला आ रहा है। अच्छे स्वास्थ्य के लिये दैनिक आहार में संतुलित पोषण का होना बहुत जरूरी है। फल एवं सब्जियां इसी संतुलन को बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान देते है, क्योंकि ये विटामिन, खनिज लवण, कार्बोहाइड्रेट, वसा व प्रोटीन के अच्छे स्त्रोत होते है। फिर भी यह जरूरी है कि इन फल एवं सब्जियों की नियमित उपलब्धता बनी रहे इसके लिये घर के चारों तरफ उपलब्ध भूमि पर घर के साधनों जैसेः उपलब्ध भूमि में रसोई व नहाने के पानी का समुचित उपयोग करते हुये स्वयं एवं परिवार के सदस्यों की देखरेख व प्रबंधन में स्वास्थयवर्धक व गुणवत्तायुक्त मनपसंद सब्जियों, फलों व फूलों का उत्पादन कर दैनिक आवश्यकता की पूर्ति की जा सकती है।

भारत में दलहन, तिलहन, खाद्य व नकदी सभी प्रकार की फसलें उगायी जाती है। तिलहन फसलों की खेती में सरसों, तिल, सोयाबीन व मूँगफली आदि प्रमुख है। मूँगफली गुजरात के साथ साथ राजस्थान की भी प्रमुख तिलहनी फसल है। राजस्थान में बीकानेर जिले के लूणकरनसर में अच्छी किस्म की मूँगफली का अच्छा उत्पादन होने के कारण इसे राजस्थान का राजकोट कहा जाता है। मूँगफली एक ऐसी फसल है जिसका कुल लेग्यूमिनेसी होते हुये भी यह तिलहनी के रूप में अपनी विशेष पहचान रखती है।

जो किसान पहले से रासायनिक खेती कर रहे है। वे जैविक खेती अपना के एकीकृत प्रबन्धन कर सकते है। ऐसा करने से वे कम लागत में अधिक गुणवत्जा वाले खाद्यान्नों को उत्पादन कर सकते है। किसान इन तरीकों को अपना कर गुणवत्ता के साथ साथ अधिकतम लाभ कमा सकते है। इसके साथ साथ जैविक खेती द्वारा पारस्थितिकी तन्त्र को संरक्षण तथा संतुलन आसानी से बनाया जा सकता है।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित।

मोस्ट. रेव्ह0 (प्रो0डॉ0) राजेन्द्र बी0 लाल
कुलपति
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय
(कृषक मित्र)

गन्ने का प्रसंस्करण

ह्रदेश राजपूत
शोध छात्रा
वार्नर कॉलेज ऑफ डेयरी प्रौद्योगिकी

डॉ0 एस. जी. एम. प्रसाद
प्रवक्ता
वार्नर कॉलेज ऑफ डेयरी प्रौद्योगिकी

प्रतिष्ठा श्रीवास्तव
शोध छात्रा
वार्नर कॉलेज ऑफ डेयरी प्रौद्योगिकी

प्रीतमा सिंह
शोध छात्रा
वार्नर कॉलेज ऑफ डेयरी प्रौद्योगिकी

सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

परिचय : दुनिया में गन्ना और मीठे चुकन्दर चीनी के मुख्य स्त्रोत है। दुनिया में कुल उत्पादित चीनी में से 60 प्रतिशत गन्ने से प्राप्त की जाती है एशिया चीनी का सबसे बड़ा चीनी उत्पादक देश है। एशिया में चीनी का उत्पादन गन्ने से जबकि यूरोप में चीनी का उत्पादन चुकंन्दर से किया जाता है।

भारत गन्ने 3 उत्पादन का सबसे बड़ा स्त्रोत है। भारत में गन्ने के कुल उत्पादन का लगभग 50 प्रतिशत उत्तर प्रदेश में उगाया जाता है। इसके बाद महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडू, आन्ध्रप्रदेश, गुजरात, बिहार, हरियाणा और पंजाब का स्थान है। यह भारत के सबसे महत्वपूर्ण गन्ना उत्पादक राज्य है। उत्तर प्रदेश में चीनी का उत्पादन सबसे बड़ा कृषि आधारित उद्योग है। भारत लगभग 25 मिलियन टन चीनी का उत्पादन करता है। गन्नो का रस भारत में बहुत ही लोकप्रिय पेय है। लेकिन फिर भी यह पैकेज के रूप में शायद ही कहीं उपलब्ध है। क्योंकि यह परम्परागत रूप से सड़कों के किनारे विक्रेताओं द्वारा अक्सर अस्वस्थ स्थितियों में बेचा जाता है। तैयार गन्ने का रस रेडी टू सर्व आर टी एस गन्ने को स्वास्थ्य एवं लोकप्रिय पेय बनाने के लिये एक प्रोद्योगिकी को विकसित किया जाना चाहिये। गन्ने के रस का प्रसंस्करण निम्न तरीके से किया जा सकता है।

सबसे पहले गन्ने की सफाई, धूलाई

↓

गन्ने का रस निकालना

↓

रस को गरम करना
(10 मिनट तक 70 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान पर)

↓

स्वाद बढ़ाने के लिये नीबू, नमक, अदरक और पुदीना डालना

↓

कॉंच की बोतल को गरम पानी से धुलकर सूखा कर इस्तेमाल करना

↓

रस को बोतल में भरना

↓

ढ़क्कन लगाना।

↓

बेतल की गरम पानी में डालकर लगभग 100 डिग्री सेंटीग्रेड पर 20 मिनट के लिये

↓

कमरे के तापमान पर छः महीने तक भण्डारित करके डम्प सकते है।

लोबिया की उन्नत खेती

अनुराग ग्रीन
एम.एस.सी. छात्र
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

श्री. दीपांशु
सहायक प्रवक्ता
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

आकाश सिंह
एम.एस.सी. छात्र
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

वनस्पतिक नाम – विग्ना अंगुइकुलाटा
कुल – फेबेसी
गुणसूत्र संख्या – 22/24
उत्पत्ति स्थान – अफ्रीका

भारत में लोबिया की खेती दाने, हरी सब्जी, हरे चारे व हरि खाद के लिये कि जांती है।

लोबिया के पौष्टिक गुण रू लोबिया के दाने में 23% प्रोटीन, 60% कार्बोहाइड्रेट, व 1.8% वसा पाया जाता है। लोबिया के दाने में पाये जाने वाले प्रोटीन का 1.9% मिथिओनिन अमिनो एसिड होता है।

जलवायु : लोबिया वर्षा तथा ग्रीष्म ऋतु में उगाई जाने वाली फसल है। दक्षिण भारत में इसकी खेती रबी मौसम में भी की जाती है। लोबिया में मक्का कि अपेक्षा सूखा तथा गर्मी को सहन करने की क्षम्ता अधिक होती है, इसकी खेती के लिये उष्णकटिबंध (tropical) तथा उपोष्ण कटिबंधीय (ubtropical) जलवायु उत्तम रहती है। इसकी खेती के लिये 12–15 डिग्री सेल्सियस तापमान अनुकूल रहता है फसल की समुचित पैदावार के लिये 27–35 डिग्री सेल्सियस तापमान अनुकूल रहता है, लोबिया की विधि पर पाले तथा तापमान का बुरा प्रभाव पड़ता है।

लोबिया को पाले से बचाने के लिये खेतो में पानी भर देना चाहिए।

भूमि : लोबिया की खेती के लिये हल्की भूमियां उपयुक्त रहती है, लोबिया की उचित विधि तथा पैदावार के लिये दोमट तथा मटियार दोमट भुमिया जिसकी पी.एच. 7.5 तक हो, उपयुक्त रहती है। भूमि जल निकास युक्त होनी चाहिये, शरिये तथा अम्लिये मृदा इसकी खेती के लिये अनुपयुक्त होती है।

भूमि की तैयारी : लोबिया की खेती के लिये खेत समतल तथा उचित जल निकास वाला होना चाहिये एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके दो जुताइयाँ देशी हल अथवा कलटिवेटर से करना चाहिये।

उन्नत प्रजातियाँ :–

1. **टाइप 2 :** इस किस्म के पौधे फलने वाले होते है फसल की अवधि 125–130 दिन की होती। उपज क्षमता 12–18 कुन्तल है। उत्तर प्रदेश के मैदानी क्षेत्रों के लिये उपयुक्त।
2. **पुसा बरसाती :** अगेति बौनी किस्म, पहली फसल 45 दिनों की अवस्था में आ जाती है, जून–जुलाई में बुवाई हेतु सर्वोत्तम किस्म, उपज क्षमता 12–15 कुन्तल / हेक्टयर।
3. **पुसा फाल्गुनी :** पौधे बोने तथा झाड़ीनुमा होते है। फसल अवधि 60–70 दिन। फरवरी– मार्च में बुवाई के लिये उप्युक्त, सफेद दाने वाले, छोटे तथा बेलनाकार, उपज 10–12 कु / ह। मध्य प्रदेश, दिल्ली, पंजाब, हरियाणा के लिये उपयुक्त।

4. **पुसा दो फस्ली :** पौधा छोटा तथा झाड़ीनुमा, फसल अवधि 70–80 दिन, इस्के दाने पुसा फाल्गुनि से कुछ बड़े तथा धब्बेदार होते है। यह प्रकाश असम्वेदंशील किस्म है, उपज 10–12 कु/ह।

5. **पुसा ऋतुराज :** यह किस्म ग्रीष्म तथा वर्षा दोनों मौसमों के लिये उपयुक्त है। फलियों की पहली फसल बुवाई के 40–45 दिनों में आ जाती है। उपज 10–12 कु/ह भारत के अधिकांश भागों के लिये उपयुक्त।

6. **पुसा कोमल :** यह लोबिया की नयी प्रजाति है, यह किस्म नई दिल्ली से विक्सित की गई है, यह सब्जी तथा दानों के लिये उपयुक्त है।

7. **सी–152 :** फसल अवधि 105–110 दिन, खरीफ की बुवाई के लिये उपयुक्त, उपज क्षमता 15–20 कु/ह। उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, दिल्ली, पंजाब, हरियाणा, बिहार, महाराष्ट्र, जम्मू कश्मीर में शुध तथा मिश्रित खेती के लिये उपयुक्त है।

8. **68 एफ. एस :** यह किस्म पुसा दो फस्ली की अपेक्षा लगभग एक सप्ताह देर से पकती है, यह बसंत ऋतु के लिये उपयुक्त है, सब्जी तथा दाने दोनों के लिये उप्युक्त है। उपज 10–12 कु/ह है।

9. **अम्बा :** यह किस्म खरीफ ऋतु के लिये उप्युक्त है, फसल अवधि 95–100 दिन है, दाने का रंग लाल होता है, यह कवक तथा जिवानूँ से उत्पन्न होने वाली बिमारियों के प्रति प्रतिरोधक तथा विषाणु से उत्पन्न होने वाली रोगों के लिये सहनशील किस्म है, इसके दाने की उपज क्षमता 25–28 कु/ह।

10. **स्वन :** यह किस्म अम्बा से जल्दी पकती है, इस किस्म कि विशेषता यह है कि फली का डंठल काफी लंबा होता है और सारी फलिया फसल के ऊपर रहती है जिस कारण फलियान पकने पर आसानी से तोड़ी जा सकती है, दाने की उपज 23–24 कु/ह तक होती है, फसल अवधि 110 दिन की होती है, यह किस्म 15 जून– 10 जुलाई तक बोई जाती है, दाना गेहरे, लाल रंग का होता है। उपज क्षमता 34 कु/ह, सबसे अधिक उपज देने वाली लोबिया की किस्म है।

चारे के लिये उपयुक्त किस्में : रशियन जोइंत, सिरसा 10, यू.पी.सी.–278, यू.पी.सी.–5286, के–397, जवाहर–1, लोबिया, जवाहर लोबिया–21

बुवाई का समय : लोबिया की बुवाई वर्षा प्रारंभ होने पर जुलाई में करते है।

बुवाई का अन्य समय

बसंत ऋतु	:	फरवरी से मार्च
खरीफ	:	मई से जून
रबी	:	अक्टूबर से नवम्बर

बुवाई : दाना व हरी फलियों के लिये बुवाई पंक्तियों में करनी चाहिय। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 50 से.मी तथा चारे व हरी खाद के लिये लोबिया की बुवाई छिटकर करनी चाहिए।

बीज दर : लोबिया का बीज दर 16–25 किग्रा/हे0 है।

बुवाई की दूरी : झाड़ीदार किस्मों के बीज की बुवाई के लिये पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45–60 से.मी तथा बीज से बीज की दूरी 10 से.मी रखी जाती है तथा बेल्दार किस्मो के लिये पंक्ति से पंक्ति की दूरी 80–90 से.मी रखते है।

बीज उपचार : बुवाई के पूर्व 2.5 ग्राम थीरम दवा से प्रति किलो बीज को शोधित करने के बाद लोबिया को विशिष्ट राइजोबीयम कलचर से बीज को उपचारित करना चाहियें।

उर्वरक व खाद : गोबर या कोम्पोस्त की 20–25 टन मात्रा बुवाई से 1 माह पहले खेत में डाल दें। लोबिया एक दल्हनी फसल है इसलिए नत्रजन की 20 किलो, फॉस्फोरस 60 किलो, पोटाश 50 किलो/हे0 खेत में अंतिम जुताई के समय मिट्टी में मिला देना चहिये तथा 20 किलो नत्रजन की मात्रा फसल में फूल आने पर प्रयोग करें।

जैविक खाद : जैविक खाद का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना लाभदायक होगा, उत्तम उपज के लिये 2 बैग भू पॉवर किलो, 395 रुपया प्रति बैग या दो बैग माइक्रो गोल्ड 40 किलो, 372 रुपया प्रति बैग या दो बैग माइक्रो फर्टई सिटि कोम्पोस्त 40 किलो, 600 रुपया प्रति बैग, 1 बैग सुपेर गोल्ड कलसिफर्त 10 किलो, 225 रुप्या प्रति बैग, 2 बैग माइक्रो भू– पॉवर 10 किलो, 425 रुप्या प्रति बैग या 2 बैग सुपेर गोल्ड जैम 10 किलो, 390 रुप्य प्रति बैग तथा 2 बैग माइक्रो नीम 20 किलो, 365 रुप्या प्रति बैग। सभी को अच्छी तरह से मिलाकर बुवाई करने से पेहले जमीन में छिड़काओ कर पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा अन्य 2–3 जुताईयाँ देशी हल या कलटीवेटर द्वारा करनी चाहिए।

सिंचाई : वर्षा ऋतु की फसल के लिये सिंचाई की आवश्यकता नहीं पढ़ती है लेकिन जल निकास अच्छा होना चाहियें। वसन्त फसल के लिये 5–6 सिंचाई की आवश्यकता पढ़ती है।

सिंचाई 10–15 दिन के अंतराल पर करनी चाहिय। भूमि में 50: नमी रहने पर सिंचाई करनी चाहियें।

खर्पत्वार नियंत्रण : लोबिया की खेती सिंचीत क्षेत्रों में किये जाने के कारण खरपतवार भी अधिक उगते है जिससे फसल को काफी हानी पहुंचती है। औसतन इस फसल में खरपतवार नियंत्रण न करने से 25–30 : पैदावार कम हो जाती है। बुवाई के 30–35 दिन बाद निराई करने से लोबिया में खरपतवारों का नियंत्रण भली भांती हो जाता है।

लोबिया में लगने वाले प्रमुख कीट :

1. **माहू :** यह कीट झुंडों में पौधों पर चिपका रहता है तथा पत्तियों, फलियों से रस चूसकर फसल को हानि पहुंचाता है।

2. **फली भेधक :** इसकी सुडियाँ फली के दाने को अंदर से खाकर नुकसान पहुंचाती है।

3. **फली बीटल :** यह कीट जायद फसल के अंकुरण के बाद अपना प्रभाव दिखाता है, इससे पत्तिओं में छेद होने साइ पौधा सूख जाता है।

कीट नियंत्रण :

☐ 5 लिटर देशी गाय का मटटा लेकर उसमें 15 चने के बराबर हींग पीस्कर घोल दें, इस घोल को बीजो पर डालकर भिगो दे तथा 2 घंटे तक रख दें, उसके बाद बुवाई करें। यह 1 एकड़ के लिये पर्याप्त होगा।

☐ देशी गाय के गोमूत्र में बीज भिगाकर उनकी बुवाई करें, ओग्रा और दीमक से पौधा सुरक्षित रहेगा।

☐ ओग्रा या दीमक से बचाव हेतु बुवाई करने से पहले बीजो को केरोसिन से उपचारित करें।

☐ 250 मिली. नीम (नीम पानी बनाने के लिये 25 किलो नीम की पत्तियों को अच्छी तरह से पीस्कर 50 लिटर पानी में तब तक उबालें जब तक की 20–25 लिटर पानी रह जाये, उसके बाद उसे उतारकर छानकर उपयोग करे) को 25 मिली. माइक्रो जैम के साथ अच्छी तरह मिलाकर उपयोग करे एवम् सुपेर 1 गोल्ड मैग्नीशियम 1 किलो, 45 रुपया प्रती बैग 200 लिटर पानी मे घोलकर माइक्रो जैम के साथ मिलाकर अच्छी तरह से तर बतर कर छिड़काव करें।

☐ 500 ग्राम लेहसुन, 500 ग्राम तीखी हरी मिर्च लेकर बरीक पीस्कर 150–200 लिटर पानी में घोलकर फसलो पर छिड़काओ करें इससे इल्ली, रस चूस्कर कीड़े नियंत्रित होंगे।

☐ बेशर्म के पत्ते 3 किलो एवम् धतूरे के फल तोड़कर 33 लिटर पानी में 500 ग्राम चने डालकर उबाले। ये चने चूहों के बिलों के पास शाम के समय डाल दे, इससे चूहों से निजात मिलेगी।

लोबिया की फसल मे लगने वाले प्रमुख रोग

मोसैक : इसके लक्षण पत्तिओं पर पीले हल्के धब्बे के रूप में दिखाई देते है, यह रोग सफेद मक्खी द्वरा फैलता है जिसे नियंत्रित कर इस रोग से निपटा जा सकता है।

रोग नियंत्रण : बिमारी आने पर ईलाज करने से अच्छी है कि बीमारी आने ही न दें इसलिये किसान को फसल में हर 15 दिन बाद पानी और माइक्रो जैम मिलाकर छिड़काओं करते रहना चाहिए। अगर रोग आ ही गया है तो उस फसल को तत्काल उखाड़कर जला देना चाहिये और तत्काल हर हफ्ते नीम पानी और जैम का छिड़काओं करते रहना चाहिए। जब तक फसल रोग मुक्त ना हो जाये। रोगमुक्त, विष्मुक्त और तंद्रुस्त बीज की बुवाई करनी चाहिये। अगर किसान आर्गनिक खेती कर रहा है तो उपरोक्त बीमारी आने की गुंजाइश ही नहीं है। उपरोक्त सभी रोग बाजार्वाद, रसाइनिकरन, किसानों की अकर्मढ्य्ता द्वारा पैदा किये गये है। अगर रोग पैदा ही नही होंगे तो बाजार को कौन पूछेगा इसलिए पहले रोग पैदा किये जाते है फिर उसका इलाज बताया जाता है। इस तरह से किसानो को लूटने का यह नया फंडा है। रोग होगा तो फसल डॉक्टर, फसल वैज्ञानिक, दवा कंपनी, दुकान आदि का जन्म होता है।

अतः किसान अपने खेतो से तंद्रुस्त फसल की छँटाई कर अपना बीज खुद तैयार करे बाजार से हमेशा दूर रहे तो लुटने से बच सकता है।

तुड़ाई : फसल बुवाई के 2 माह बाद तैयार हो जाती है, फसल तैयार हो जाने पर फल 2–3 दिन के अंतर पर 2 माह की अवधी तक तोड़े जा सकता है।

शेष पृष्ठ सं० 12--पर

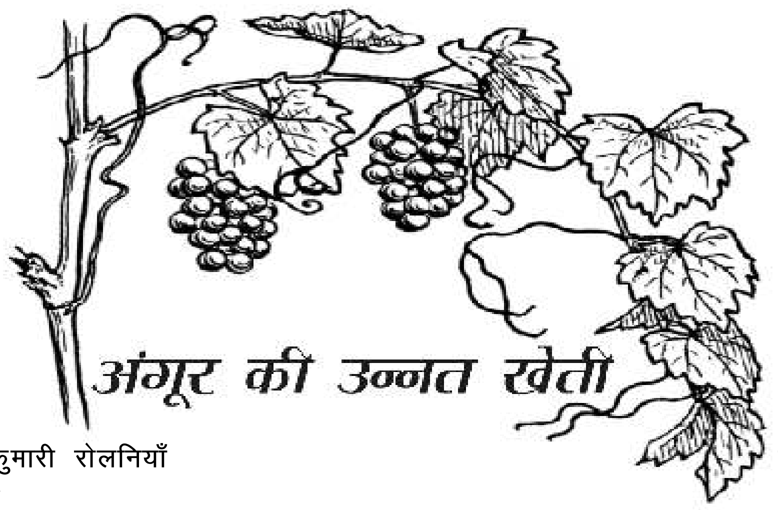

अंगूर की उन्नत खेती

मनीषा कुमारी रोलनियाँ
शोध छात्रा
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

डॉ0 एस. सरवनन
सह–प्रवक्ता
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

वानस्पतिक नाम – वाइटिस विनिफेरा
कुल – वाइटेसी
उत्पति स्थान – आर्मेनिया (एशिया माइनर के पास)

अंगूर विश्व का महत्वपूर्ण उपोष्ण कटिबंधीय फल है। इसका जन्म स्थान रूस में केस्पियन सागर के किनारे आर्मेरिया को माना जाता है। ऐसा माना जाता है कि भारत में अंगूर अफगानिस्तान व इराक से लाया गया है। उतरी भारत में पंजाब, हरियाणा, राजस्थान अंगूर के कुल उत्पादन का लगभग 80 प्रतिशत शराब बनाने के काम आता है। इसके अतिरिक्त ताजे फल खाने के रूप में व सुखाकर किशमिश बनाने के काम आते हैं। अंगूर में लगभग 20 प्रतिशत शर्करा पाई जाती है साथ ही आयरन कैल्शियम व फास्फोरस भी पाया जाता है।

जलवायु :–अंगूर उपोष्ण जलवायु का फलवृक्ष है। जिसके लिए गर्म सूखा गर्मी का मौसम एवं ठण्डा तथा वर्षायुक्त सर्दी का मौसम उपयुक्त रहता है। इस प्रकार की जलवायु में ज्यादा ठण्ड में पत्तियाँ गिराकर सुषुप्तावस्था में रहता है। बसन्त ऋतु में अंगूर में नई वृद्धि एवम् फलत होती है इसका फल गर्मियो में पकता है। उत्तरी भारत में फल पकने के समय वर्षा होने से अंगूर के फल फट जाते है व मीठे नहीं होते है। पौधो की उचित वृद्धि के लिए 28–32^0 सेल्सियस सर्वोतम तापमान है।

भूमि :– अंगूर की खेती सभी प्रकार की भूमियो में की जा सकती है लेकिन अच्छे जल निकास वाली दोमट मिट्टी सर्वोतम मानी जाती है। भूमी में एक मीटर गहराई तक कुड़ी परत नही होनी चाहिए। जीवांश पदार्थ पर्याप्त मात्रा में होना जरूरी है भूमि का पी.एच 6.5–7.5 होना चाहिए।

उन्नत किस्मे :– अंगूर की प्रमुख किस्मो का वर्णन निम्नलिखित है–

1. **रंघित/रंगीन बीजदार किस्मे** :– बैंगलोर ब्लू गुलाबी व्मसकट, क्रिमंसन चोरनी।
2. **रंगीन बीजरहित किस्मे** :– ब्यूटी सीडलेस, शरद सीडलेस
3. **सफेद बीजदार किस्मे** :– अनाबेशाही, दिलखुश
4. **सफेद बीजरिह किस्मे** :– परलेट, पूसा सीडलेस, तास ए गणेश सौनाका, मानिक चमन

1. **अनाबेशाही** :– इसकी लता अत्यधिक ओजस्वी तथा उत्पादक होती है। अंगूर का फल दीर्घवृतीय एवं लम्बे से लेकर कुछ अंडाकार होता है। रंग हल्का मक्खनी होता है तथा कुछ बड़े आकार के 8–9 ग्राम भार के होते है। छिलका पतला गूदा कोमल एवं मीठा तथा बीजो की संख्या 2–3 होती है। इस किस्म में दिलखुश नाम का एक उत्परिवर्ती विकसित किया गया है।

2. बंगलूर ब्लू :– यह किस्म औरंगाबाद (महाराष्ट्र) से जातियों से अधिक मिलती–जुलती है। इसकी लता ओजस्वी तथा उत्पादक होती है। इसके ऊपर एथ्रैकनोज तथा चूर्णिल आसिता रोगो का प्रभाव नही पड़ता है। अंगूर गोल, मध्यम आकार के (5–6 ग्राम) अंगूर नील लोहित काले रंग के होते है। बीजो की संख्या 3–4 होती है।

3. पूसासीडलेस :– इस किस्म का वरण भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में किया गया है। इसके अंगूर थॉम्प्सन सीडलैस से कुछ लम्बे होते है। अंगूर हल्का पीला कुछ लम्बा अंडाकार बीज रहित तथा मीठा होता है। उत्तर भारत में यह किस्म जून के तीसरे सप्ताह में पक जाती है।

4. थाम्प्सन सीडलेस :– यह किस्म संयुक्त राज्य अमेरिका से मंगाई गई है। महाराष्ट्र तमिलनाडु तथा उत्तर प्रदेश के क्षेत्रो में यह सफलतापूर्वक उगाई जाती है। लता अधिक ओजस्वी परन्तु कम उत्पादक होती है। अंगूर छोटा हल्का पीला से तास ए गणेश व सोनाका नामक उत्परिवर्ती किस्मों का विकास किया गया है।

अन्य किस्मे :–

1. अर्कावती :– (बंगलूर ब्लू x थाम्प्सन सीडलेस)
2. अर्का हंस :– (बंगलूर ब्लू x अनाबेशाही)
3. अर्का श्वेता :– (अनाबेशाही x थाम्प्सन सीडलैस)
4. पूसा नवरंग :– (मेडेलेन ऐंगवाइन x रूबी रेड)
5. पूसा उर्वसी :– (हुर x ब्यूटी सीडलेस)

भोकरी चीमा साहेबी, परलेट, ब्यूटी सीडलेस

पादप प्रवर्धन :– अंगूर का प्रवर्धन कलम द्वारा किया जाता है। इसके लिए 23 सेमी लम्बी एक वर्ष पुरानी परिपक्व कलम का प्रयोग करना चाहिए। कलमे खंटाई की गई शाखाओं से तैयार की जा सकती है। जिन क्षेत्रों में भूमि में लवणों की अधिकत्ता अथवा नेमाटोड की समस्या हो, डोग्रिज नामक मूलवृंत पर अंगूर की उन्नत किस्मों का रोपण करना चाहिए।

पौधा रोपण :– पौध रोपण का सर्वोत्तम समय जनवरी माह है। पौधो की आपसी दूरी मिट्टी जलवायु किस्में तथा कटाई – छटाई के तरीके पर निर्भर करती है। अंगूर के पौधे 3x3 मीटर की दूरी पर लगाये जाते है। पौधे लगाने से पहले 45x45x45 सेमी आकार के गढ्ढे खोद कर खाद मिट्टी के मिश्रण से भर देते है। प्रत्येक गढ्ढे में 10–15 किग्रा गोबर की खाद, आधा किग्रा सुपर फास्फेट तथा 50 ग्राम क्यूनालफॉस देना चाहिए। गढ्ढे भरने के बाद पौधे लगाकर सिंचाई अवश्य करें।

खाद एवं उर्वरक :– अंगूर में खाद एवं उर्वरक की मात्रा प्रतिवर्ष पौधे की आयु के अनुसार जनवरी माह मे कटाई–छटाई के बाद निम्न प्रकार दी जानी चाहिए :–

क्र.स.	पौधे की आयु	गोबर की खाद	यूरिया	सुपर फास्फेट	म्यूरेट ऑफ पोटाश
1.	एक वर्ष	20 किग्रा	200 ग्राम	250 ग्राम	————
2.	दो वर्ष	40 किग्रा	400 ग्राम	500 ग्राम	————
3.	तीन वर्ष	50 किग्रा	600 ग्राम	1.000 ग्राम	200 ग्राम
4.	चार वर्ष	60 किग्रा	800 ग्राम	1.5 ग्राम	400 ग्राम
5.	पाँच वर्ष	70 किग्रा	1.0 किग्रा	2.0 किग्रा	500 ग्राम

संधाई :– अंगूर के पौधे लगाने के दो–तीन वर्ष तक उनको निश्चित आकार देने के लिए जो कटाई की जाती है उसे संधाई या ट्रेनिंग कहते है इसका मुख्य उद्देश्य अंगूर की बेलो का एक निश्चित ढांचा तैयार करना होता है। जिससे बेलो का विकास समुचित रूप से हो सके और अधिक पैदावार के बोझ को बिना हानि पहुंचे वहन कर सके।

अंगूर में संधाई की निम्न विधियाँ प्रचलित है :–

1. पण्डाल विधि (बावर सिस्टम) :– दक्षिणी भारत में अंगूर की ट्रेनिंग के लिए इस विधि का प्रयोग अधिकतर किया जाता है। इस विधि में खम्भे पर 2 मीटर की ऊंचाई पर चारों दिशाओ में तार खींच दिये जाते है। इस तरह तारो द्वारा ऊपर एक पण्डाल बना लिया जाता है। पण्डाल की छत की चौड़ाई 9 मीटर तथा लम्बाई आवश्यकतानुसार रखी जाती है। पण्डाल के दोनों तरफ 3 मीटर के अंतर पर अंगूर की बेलो को लगा दिया जाता है।

2. ट्रेलिस विधि :– उत्तरी भारत में यह विधि अधिक अपनाई जाती है। इस विधि द्वारा लताओं को ट्रेनिंग के लिए सबसे पहले लोहे के खम्भे गाड़ दिये जाते है। इन खम्भो से होते हुए जमीन के समानान्तर दो तार खीचे जाते है। पहला तार जमीन से 90 सेमी. की ऊचाई पर खीचा जाता है। पौधो की 3X3 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है। प्रारंभ में अंगूर की बेल को एक मुख्य शाखा के रूप में ट्रेन किया जाता है फिर इसके मुख्य तने को 1.50 मीटर की ऊचाई पर ले जाकर काट दिया जाता है। नीचे के हिस्से में तारो के आस पास की कलियो में जो प्ररोह फूटते है उन्हें बढ़ने दिया जाता है और शेष की कटाई कर देते है।

1. कोर्डन विधि, शीर्ष विधि और टेलीफोन विधि से भी सिंचाई की जाती है।
2. टेलीफोन विधि परलेट एवं थोम्प्सन सीडलेस के लिए उपयुक्त है।

कटाई – छंटाई :– अंगूर की बेलो की कटाई–छटाई जनवरी के महीने में करना आवश्यक होता है क्योंकि इस समय अंगूर की बेल सुषुप्तवस्था में रहती है तथा पैसिल के आंकार की शाखाओं को काटा जाता है।

फल देने वाले पौधों की कटाई छटाई की दो विधियाँ है :–

1. **खूटी विधि :–** इसमें शाखाओं का आधार से एक से तीन वृद्धि करने वाली कलिया छोड़कर काट दिया जाता है। कटे भाग से नई टहनियाँ निकलती है जो फलत करती है।
2. **शाखा विधि :–** अंगूर की कुछ जातियों पर फल पिछले वर्ष की वृद्धि पर उत्पन्न होते है।

अंगूर की जातियों की आधी शाखाओं को फल प्राप्त करने के उद्देश्य से केवल ऊपर से ही थोड़ा काटते है। फल तोड़ने के बाद इन शाखाओं को खूटी विधि तथा दूसरी वृद्धि की हुई शाखाओं को खूटी विधि तथा दूसरी वृद्धि की हुई शाखाओ को ऊपर से थोड़ी काटते है। इस प्रकार से एक वर्ष पुरानी शाखायें तैयार करके प्रति वर्ष अच्छी फलत प्राप्त होती है।

खरपतवार नियन्त्रण :– दक्षिण भारत में जहां पूरे वर्ष अंगूर की लताएं सक्रिय रहती है, बाग से खरपतवारो को निकालना अति आवश्यक होता है। मिट्टी को आमतौर से निराई–गुड़ाई द्वारा ठीक करते है, जिससे मिट्टी में पपड़ी नहीं पड़ती है और साथ ही खरपतवारो का उपयुक्त होता है। साइमाजीन दवा की 7.5 किग्रा0 प्रति हैक्टर मात्रा उतरी कर्नाटक की दशाओं में चौड़ी पती वाले खरपतवारो के नियंत्रण के लिए उपयुक्त पाई गई है।

परागण एवं फलन :– बसंत और ग्रीष्म ऋतु में पुष्पन प्रारम्भ होता है। परिपक्व प्ररोही के प्ररोहो पर प्राथमिक कलिकाएं फल कलिकाओं मे विभेदित हो जाती है। अप्रैल में कटाई के लगभग 46 दिन बाद इस प्रकार का विभेदन प्रारम्भ होता है और लगभग 110 दिन तक चालू रहता है। अंगूर स्वपरागित पौधा है। इसकी कुछ किस्मो जैसे ब्लैक कोरिंथ में अनिषेक जनन होता है। कुछ किस्मो में पर परागण की आवश्यकता भी पड़ती है।

रोग एवं कीट नियन्त्रण :– अंगूर की लता में कई रोग लगते है जिनका विवरण नीचे दिया गया है –

1. मृदुरोमिल कवक (डाउनी मिल्डयू) :– यह रोग प्लामोपरा वीटीकोला कवक द्वारा होता है। इसका प्रभाव लता की पतियो, प्ररोह आदि पर अत्यधिक पड़ता है। इस रोग की रोकथाम के लिए एक प्रतिशत बोर्डो मिश्रण या ब्लाइटाक्स 50 अथवा जिनेब (0.3 प्रतिशत) को कटाई–छटाई के तुरन्त बाद छिड़क देना चाहिए।

2. चूर्णित आसिता (पाउडरी मिल्डयू) :– यह रोग अंसिनुला निकेटर नामक कवक से होता है। रोग ग्रस्त पती के ऊपर कवक चूर्ण की तरह फैल जाता है। इस रोग की रोकथाम के लिए निलम्बनशील गंधक (0. 25 प्रतिशत) अथवा बावीस्टीन (0.1 प्रतिशत) नामक कवकनाशी रसायनो को लता की कटाई के एक सप्ताह बाद छिड़कना चाहिए।

कीट :– अंगूर की लता में पिस्सू भृंग (सोलोडोरट स्ट्रीगीकोलिस) और चौफर भृंग (एडोरिटस जाति) बहुत अधिक हानि पहुचाते है। इन कीटो की रोकथाम के लिए 0.3 प्रतिशत कार्बोरिल का छिड़काव किया जाना चाहिए। अंगूर की लताओ में थ्रिप्स (फिपीफोरोथिप्स क्रयुन्टाटस) नामक कीट भी अधिक हानि पहुचाता है। इसकी रोकथाम के लिए मेथाइलपैराथियान (0.05%) का छिड़काव किया जाता है।

उपज, भण्डारण, विपणन एवं उपयोग :– अंगूर की पैदावार लता की उम्र व कटाई – छटाई की क्रियाओ पर निर्भर करती है औसतन उपज 120 क्विण्टल

से 200 क्विण्टल प्रति हेक्टर होती है। अंगूर के फलो का भण्डारण 0–2^{0} सेल्सियस तापमान व 80–85 प्रतिशत आर्द्रता पर 6–8 सप्ताह तक किया जा सकता है। दूर भेजने के लिए अंगूरो को बहुत अधिक पकने नहीं दिया जाता है। अंगूर का निर्यात भी किया जाता है। अंगूर का उपयोग बहुत तरह से होता है। इसके दो प्रमुख उत्पाद अंगूर की शराब और किशमिश उल्लेखनीय है। लगभग 80 प्रतिशत ताजा खाने हेतु और 20 प्रतिशत उपज किशमिश बनाने में काम आती है। केवल 0.5–1. 0 प्रतिशत फल रस व वाइन बनाने के काम में प्रयोग किए जाते है।

पृष्ठ सं० 08--का शेष

उपज : आमतौर पर 50–60 कु. हरी फलिया अथ्वा 12–15 कु. दाने अथवा 250–300 कु/हे0 चारा उद्देश्य के अनुसार मिल जाता है।

तुड़ाई के बाद का प्रबंध : लोबिया की हरी फलिया को 4 डिग्री तापमान और 90–95% नमी वाले कोल्ड स्टोरेज में 2 हफ्ते तक रखा जा सकता है।

बीज उत्पाद : लोबिया स्व–परागण फसल है और बीज उत्पाद कुछ हद तक सरल है। बीज वाली फसल अधिकांश रूप से बसंत ऋतु में बोई जाती है क्योंकि इसमें बीमारी व कीटों का खतरा कम रहता है। हालांकि मोसैक प्रतिरोधक प्रजातियों के लिये यही फसल वर्षा के दौरान लगाई जाती है। आनुवंशिक शुद्ध बीजो की उपज के लिये लोबिया की 2 प्रजातियों के बीच 50 मी. की अल्गाव दूरी होना आवश्यक है। 2 निरीषण, पहला फूल खिलने के समय वरन् दूसरा फलीयो के परिपक्व होने पर किये जाते है जिनके द्वारा अनावश्यक पौधे निकाल दिये जाते है। प्रजाति व वातावरण के मद्देनजर बीज दर 10–12 कु/हे0 तक जा सकती है।

कटाई के पश्चात की जाने वाली प्रक्रियायें :

1. **गहाई/ताड़ना :** कटाई के पश्चात लोबिया की फलियो को धूप में सुखाने के लिये रख देना चाहियें। इस्के बाद एक लकड़ी से उसकी गहाई करनी चाहियें जिससे फलियों में से बीज बाहर आ जाये। इस बात का खास ध्यान रखे की फलीयो को ज्यादा जोर से ना मारा जाये अन्यथा बीज चक्ना चूर हो सकता है। अगर फलिया थोड़ी हो तो उन्हें उँगलियों से भी तोडा जा सकता है।
2. **छँटाई :** बीज की गुण्वत्ता इस बात को दर्शाती है कि फसल का विकास भली भांती हुआ है। अतरू बुवाई से लेकर कटाई के समय तक इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहियें कि फसल संक्रमित न हो। छंटाई प्रक्रिया के माध्यम से टूटे या खराब बीज, पत्थर, आदि को स्वस्थ बीजो से अलग कर दिया जाता है। अतरू बीज उत्पादकों को इस बात का ध्यान रखना चाहियें कि वे बीज बाजारों में उत्तम दर्जे वाले बीजो को ही उतारे।
3. **श्रेडीकरण :** उत्तम पोषण वाले लोबिया के बीजो को सेवन के लिये ताजा, परिवर्तित, या सुखाकर किया जाता है। अतरू उपभोग व विपणन के लिये स्वस्थ पत्तियों व उत्तम बीजो का होना आवश्यक है। टूटे, संक्रमित या दूषित बीजो को हटाकर श्रेडीकरण की प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है। झुर्रिदार बीजो को भी हटाना इस प्रक्रिया में शामिल है।

लोबिया बीज उत्पादन के लाभ :

लोबिया बीज उत्पादन के अनेको लाभ है जिन्मे से कुछ निम्लिखित है :–

1. लोबिया फसल के फूल आकार में बड़े होते है जिससे उसमे बधिया कराना सरल हो जाता है। कृत्रिम पार की प्रक्रिया भी सरल हो जाती है, वरन हाईब्रिड बीजो की व्यव्हार्यता में संशोधन होता है।
2. लोबिया सूखे मौसम को सहन करने में योग्य है। अतः इस फसल को उन क्षेत्रों में भी लगाया जा सकता है। जहां सिंचाई की सुविधा उप्लब्ध ना हो।
3. लोबिया की फसल नाइट्रोजेन (nitrogen) नियतन में लाभदायक होती है। प्रति हेक्टेयर में लगभग 73–240 किलो नाइट्रोजेन का नियतन होता है।
4. मानसून आरम्भ होने से पेहले बीजो के दाम में बढ़ोतरी आ जाती है और किसान निचले दर्जे के बीजो का प्रयोग करता है वरन् जिसका असर फसल के उत्पादन पर भी पड़ता है। बीज उत्पादन के माध्यम से किसानो की इस समस्या का हल हो सकता है।

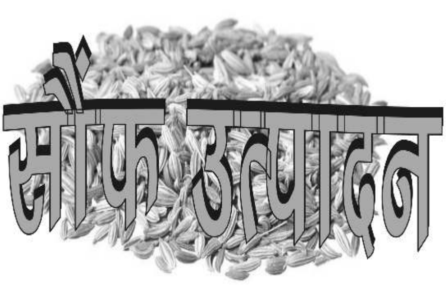

सौंफ उत्पादन की उन्नत तकनीक

डॉ0 मनीष केसरवानी
विषय वस्तु विशेषज्ञ
प्रसार निदेशालय
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

मुकेश पी. मसीह
विषय वस्तु विशेषज्ञ
प्रसार निदेशालय
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

प्रो0 (डॉ0) विल्सन किस्पोट्टा
निदेशक प्रसार
प्रसार निदेशालय
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

सौंफ महत्वपूर्ण मसाले की फसल है। सौंफ की उपयोगिता इसमें पाये जाने वाले तेल के कारण होती है। इसके तेल में एनीथाल 90 प्रतिशत तक पाया जाता है। सौंफ का उपयोग मसालों के अतिरिक्त घरेलू एवं आयुर्वेदिक औषधियों के रूप में भी किया जाता है। प्रदेश में सौंफ की खेती मुख्य रूप से टोंक, सिरोही, जोधपुर व भरतपुर जिलों में की जाती है।

भूमि : रेतीली भूमि को छोड़कर सभी प्रकार की मृदाओं में जिनमें जीवांश की मात्रा पर्याप्त हो सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। परन्तु सफल उत्पादन के लिए उचित जल निकास वाली बलुई दोमट भूमि सर्वोत्तम होती है। अधिक क्षारीय एवं अम्लीय मृदाओं इसके सफल उत्पादन में बाधक मानी जाती है।

उन्नत किस्में :–

एस. 7–9 : पौधे बौने आकार के अधिक शाखायें व पुष्प छत्र एवं दाने आकार की उपज 12 कु. प्रति हैक्टेयर प्राप्त होती है।

पी.एफ. 35 : पौधे फैले हुए लम्बे, बड़ा पुष्पछत्र, दाने मध्यम आकार के हरे रंग एवं गहरी धारी युक्त होते है। बीज में 1.9 प्रतिशत तेल होता है। फसल लगभग 216 दिन में पककर तैयार हो जाती है। औसत दानों की उपज 16.50 कु0 प्रति हेक्टेयर होती है।

गुजरात–1 सौंफ : पौधा लम्बा, फैला हुआ झाड़ीनुमा होता है। शुष्क परिस्थितियों के लिए यह उपयुक्त किस्म है। बड़े आकार के पुष्पछत्र अधिक छत्रक, दाने बड़े लम्बे आकार के गहरे रंग के होते हैं। इस किस्म के दाने कम झड़ते हैं। फसल लगभग 220 से 230 दिन में तैयार हो जाती है। औसत दानों की उपज 16 से 17 कु0 प्रति हे0 प्राप्त होती है। इसके अलावा यूएफएमआई, आरएफ–101, आरएफ–125 प्रमुख किस्में हैं।

खाद एवं उर्वरक : सौंफ की अच्छी फसल एवं पैदावार के लिए 20 से 25 टन गोबर या कम्पोस्ट खाद के साथ–साथ नत्रजन 80 किग्रा, स्फुर 60 किग्रा एवं पोटाश 20 से 30 किग्रा की प्रति हे0 आवश्यकता होती है। अच्छी सड़ी हुई गोबर या कम्पोस्ट की खाद को खेत में तैयारी के समय एक समान रूप से बिखेर कर जुताई करें। अंतिम जुताई समय स्फर एवं पोटाश की पूरी मात्रा के साथ नत्रजन की आधी मात्रा को खेत में आधार खाद के रूप में छिटककर दें एवं शेष नत्रजन की आधी मात्रा को बुवाई या रोपाई के 45 दिन बाद अधर खाद के रूप में छिटककर दें।

बीज की मात्रा : बीज की मात्रा बुवाई की विधि पर निर्भर करती है। यदि बीज की बुवाई छिटकवा विधि से की जा रही है तो 10 से 12 किग्रा एवं रोपण विधि के लिए 3 से 4 किग्रा बीज प्रति हे0 आवश्यकता होती है।

खेत की तैयारी : सौंफ की अच्छी फसल के लिए जीवांश खाद एवं उर्वरकों को खेत में 20 टन सड़ी हुई गोबर एवं कम्पोस्ट खाद को समान रूप बिखेर कर

शेष पृष्ठ सं० 16--पर

चौलाई की अगेती खेती से किसान भाई प्राप्त करें अधिक मुनाफा

डॉ0 बालाजी विक्रम
अध्यापन सहायक
उद्यान विभाग
शियाट्स, इलाहाबाद

डॉ0 दिनेश कुमार
सह – प्रवक्ता
कृषि अर्थशास्त्र एवं कृषि व्यवसाय
प्रबन्धन विभाग, शियाट्स, इला0

डॉ0 वी0 एम0 प्रसाद
प्रवक्ता एवं विभागाध्यक्ष
उद्यान विभाग
शियाट्स, इलाहाबाद

डॉ0 विजय बहादुर
सह–प्रवक्ता
उद्यान विभाग
शियाट्स, इलाहाबाद

सब्जियां जो आपके शरीर को दैनिक गतिविधियों तथा स्वस्थ जीवन जीने के लिए एक आवश्यक घटक होती हैं। हमारे शरीर में रक्त की मात्रा बराबर बनी रहे इसके लिए लोहे की सही मात्रा की जरूरत होती है। लोहा जो हरी सब्जियों से प्राप्त की जाती है इसके लिए कुछ विशेष सब्जियों कों चुनते हैं हम यहां बात कर रहे हैं चौलाई की जो लोहे का सही स्रोत हैं। हरी चौलाई में लोहे के सर्वोच्च प्रतिशत होते हैं। हरी सब्जियां मुख्यतः चौलाई के नियमित उपयोग के द्वारा जो कम हीमोग्लोबिन की वजह से पीड़ित लोगों को समय की एक छोटी सी अवधि में बीमारी का इलाज किया जा सकता है। चौलाई ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतुओं में उगाई जाने वाली पत्तेदार सब्जी है। यह पोषण युक्त सब्जी पत्तेदार सब्जी किचेन गार्डेनिंग व व्यावसायिक उत्पादन दोनों ही दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। इतनी कम अवधि में प्रति इकाई क्षेत्रफल से अधिक उपज प्राप्त होती है। इसमें रेशा, विटामिन ए, बी, लौह, कैल्शियम, फास्फोरस व पोटेशियम पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। चौलाई के कोमल तनों व पत्तियों को सब्जी के लिये प्रयोग किया जाता है। इसके बीजों को प्रयोग हलवा, लड्डू, खीर इत्यादि बनाने में प्रयोग होता है। यह खून के विकार को दूर करने व पेट साफ करने में विशेष लाभकारी होता है। चौलाई की फसल जलवायु की प्रतिकूलता को काफी सीमा तक सह लेती है। यह गर्मी, बरसात दोनों ही ऋतुओं में आसानी से उगायी जा सकती है। शरद ऋतु में इसकी खेती नहीं की जा सकती है। गर्मी में यह उच्च तापमान भी आसानी से सह लेती है।

प्रजातियाँ :–

चौलाई की प्रमुख किस्में हैं :–

बड़ी चौलाई : यह किस्म गर्मी व वर्षा दोनों के लिये उपयुक्त है। पत्तियॉ एवं तने बड़े आकार के तथा जल्दी बढ़ने वाले होते हैं।

छोटी चौलाई : इसके पौधे व पत्तियाँ छोटी और हरी होती हैं। तना पतला होता है। यह कम उपज वाली प्रजाति है तथा केवल ग्रीष्मकाल के लिये ही अच्छी मानी जाती है।

- **कोयम्बटूर – 1 :** पत्तियाँ गहरी, हरी, चौड़ी तथा धारीदार सतह वाली, तना गोल हरा तथा रसदार होता है। इसकी उपज क्षमता 90–100 कुन्टल हेक्टेयर है।
- **कोयम्बटूर – 2 :** यह प्रजाति बोआई के 20–25 दिन बाद तैयार हो जाती है। इसकी पत्तियाँ हरी, लम्बी होती है। इसकी उपज क्षमता प्रति हेक्टेयर 130 कुन्टल है।
- **कोयम्बटूर – 3 :** यह प्रजाति कई बार कटाई के लिये उपयुक्त है। बोआई के 20–25 दिन बाद कटाई योग्य हो जाती है। इसके बाद प्रति सप्ताह के अन्तर पर काटा जा सकता है। इसकी उपज क्षमता प्रति हेक्टेयर 300 कुन्टल हेक्टेयर है।
- **कोयम्बटूर – 5 :** अधिक उपज वाली टेट्राप्लाएड प्रजाति है। इसकी वानस्पतिक वृद्धि अच्छी होती है।

पूसा किरन : इसकी पत्तियाँ अत्यधिक मुलायम, चौड़ी, हरी, पत्तियों से लगा डंठल 5.0–6.5 सेमी लम्बा तथा पत्तियों व डंठल का औसत 1:4–6 होता है। बीज की बोआई के 21–25 दिन बाद काटने योग्य हो जाती है।

पूसा लाल चौलाई : इसमें पत्तियों व तने का रंग लाल होता है पत्तियों की लम्बाई 5–8 सेमी व चौड़ाई 6.5 सेमी तक होती है। पौधे प्रायः 42 सेमी ऊँचाई के होते हैं। पहली कटाई बोआई के 22–24 दिन बाद की जा सकती है। इसकी उपज क्षमता प्रति हेक्टेयर 300 कुन्टल होती है।

पूसा कीर्ति : यह प्रजाति गर्मी के लिये उपयुक्त है। इसकी पत्तियां 6–8 सेमी लम्बी व 4–5 सेंमी चौड़ी होती है। यह बोआई के 30–35 दिन बाद कटाई के योग्य हो जाती है। पुनः 10–12 दिनों के अन्तराल पर कटाई की जाती है। इस प्रजाति की औसत उपज प्रति हेक्टेयर 500 कुन्टल है।

भूमि और भूमि की तैयारी :– चौलाई की खेती सभी प्रकार की भूमियों में की जा सकती है परन्तु जीवांश पदार्थ युक्त 6.5–7.5 पी.एच. मान वाली बलुई दोमट भूमि इसके लिये सर्वोत्तम होती है। खेत की तैयारी से पूर्व प्रति हेक्टेयर 200 कुन्टल गोबर की खाद या 50–60 कुन्टल नादेप कम्पोस्ट मिला देना चाहिये। खेत की 3–4 जुताई करके पाटा चलाकर भूमि को भुरभुरी व समतल बना लेते हैं। खेत से खरपतवार निकालकर साफ कर लेते हैं और खेत में उचित आकार की क्यारियॉ बना लेते हैं। क्यारियों का आकार 3–5 मीटर लम्बा व 1.25–1.75 मीटर चौड़ा खाना उपयुक्त रहता है।

खाद एवं उर्वरक :– बोआई के पूर्व कार्बनिक खादों के अलावा प्रति हेक्टेयर 100 किग्रा नाइट्रोजन, 50 किग्रा फास्फोरस व 30 किग्रा पोटाश आवश्यक होता है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा (108 किग्रा यूरिया, 312 किग्रा सिंगल सुपर फास्फेट व 50 किग्रा म्यूरेट ऑफ पोटाश) बोआई से पूर्व आखिरी जुताई के समय खेत में फैलाकर मिला देते हैं। नाइट्रोजन की षेश मात्रा दो भागो में बांटकर प्रत्येक कटाई के बाद छिटककर (टाप ड्रेसिंग) द्वारा फैलाते हैं।

बीज एवं बोआई :–

बोने का समय : चौलाई की बोआई गर्मी व बरसात दोनो ही ऋतुओं में की जा सकती है, परन्तु बरसात की फसल में पत्तियां कीड़ों से प्रभावित हो जाती है, तथा ग्रीष्म ऋतु में सिंचाई की जल्दी–जल्दी आवश्यकता पड़ती है। ग्रीष्म ऋतु की फसल की बोआई फरवरी–मार्च तथा वर्षा ऋतु की फसल की बोआई जून–जुलाई में करते हैं।

बीज की मात्रा : एक हेक्टेयर में बोआई के लिये 1.5–2.0 किग्रा बीज की आवश्यकता पड़ती है।

बीज की बोआई : बोआई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिये। इसके बीज बहुत छोटे होते हैं। इसलिये इसकी बोआई के लिये बीज के साथ रेत मिलाकर करते हैं जिससे बीज खेत में समान रूप से वितरित हो जाये। बीज खेत में छिटककर बोते हैं या 20–25 सेंमी दूर बनी लाइनों में बोआई करते हैं। पौधों के उगने के बाद घने पौधों को निकालकर रोपाई कर सकते हैं। बोआई के समय नमी पर्याप्त होने पर बीज का अंकुरण अच्छा होता है परन्तु बोआई के समय नमी की कमी होने पर बोआई के बाद एक हल्की सिंचाई कर देनी चाहिये।

सिंचाई :– बरसात की फसल में तो सिंचाई की प्रायः आवश्यकता नहीं पड़ती, परन्तु बसन्त या ग्रीष्म कालीन फसल में भूमि की किस्म व तापमान के अनुसार 5 से 7 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करते हैं। प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई करना अच्छा होता है।

अन्तःसस्य क्रियायें (निराई–गुड़ाई) :– चौलाई के खेत में खरपतवार न उगने दें। यदि बोआई पंक्तियों में की गयी हो तो लाइनों के मध्य दो निराई करनी चाहिये साथ ही हल्की गुड़ाई भी करनी चाहिये जिससे पौधों की जड़ों के पास वायु संचार हो सके, इससे पौधों की वृद्धि अच्छी होती है।

फसल सुरक्षा :– फसल में पर्णचित्ती रोग लगता है, जिसमें पत्तियों के ऊपरी सतह पर छोटे–छोटे भूरे रंग के गोल धब्बे दिखाई देते हैं। ये धब्बे बाद में मिलकर पूरी पत्ती पर फैले जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिये रोग रहित स्वस्थ बीज का प्रयोग करें।

फसल पर डाएथेन एम–45 अथवा डाइफॉल्टान–80 घुलनशील चूर्ण अथवा डाएथेन जेड–78 का 1.0–1.2 किलोग्राम प्रति हैक्टेअर अथवा फाइटोलान का 1.2–1.5 किलोग्राम प्रति हैक्टेअर की दर से छिड़काव करने पर रोग का प्रभावी नियन्त्रण होता है। चौलाई में पत्ती काटने वाले कीट भी लगते हैं। इनके नियंत्रण के लिये

नीम गिरि के 4 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें। इन सब्जियों पर रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग कम से कम करना चाहिये।

कटाई :– बोआई के 20–25 दिन बाद पहली कटाई की जाती है। बाद की कटाई 10–12 दिन के अन्तराल पर करते हैं। औसत 4–5 कटाई मिलती है। पौधों की कटाई जमीन की सतह से 5–6 सेंमी ऊपर से करते हैं जिससे पौधों की बढ़वार जल्दी हो सके। कटाई हमेशा तेज धार वाले हंसिये से करना चाहिये। जिससे पौधे प्रभावित न हो। कटाई तब तक की जा सकती है जब तक कि पौधों में फूल निकलना न शुरू हो जायें।

उपज :– पत्तियों की पैदावार भूमि, प्रजाति, बोने का समय, पोषक तत्व प्रबन्धन आदि बातों पर निर्भर करता है। सामान्यतः प्रति हेक्टेयर 150–250 कुन्टल उपज प्राप्त होती है। चौलाई का बीज उत्पादन करने के लिये बोआई के समय ध्यान रखना चाहिये कि बीज वाला खेत अन्य प्रजाति के खेत से कम से कम 200 मीटर दूर रहे जिससे बीज की आनुवंशिक व प्रजातीय शुद्धता बनी रहे। बीज की फसल में चौलाई की आखिरी दो कटाईयां हीं ली जाती हैं। सामान्यतः 3 कटाई के बाद इसे बीज के लिये छोड़ देते हैं। फूल लगने के पहले व फूल लगने पर जंगली चौलाई व ऐसे पौधे जो प्रजाति के गुणों से अलग हों, उन्हें उखाड़कर बाहर से निकाल दें। खेत में खरपतवार भी न उगने दें। फसल में पादप सुरक्षा का भी ध्यान रखें। जब पौधे की अधिकतर पत्तियां पीली पड़ जायें तो उन्हें काटकर, सुखाकर मड़ाई कर लेते हैं और बीज को साफ कर लेते हैं। बीज में नमी की मात्रा 8 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिये।

पृष्ठ सं० 13--का शेष

मिट्टी पलटाने वाले हल से जुताई करें। तद्पश्चात् 2 से 3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करके मिट्ट को 15 से 20 सेमी गहराई तक भुरभुरा बना लें। जुताई के समय पर्याप्त नमी न हो तो पलेवा कर खेत की तैयारी करें।

बुवाई का समय : सौंफ बुवाई के लिए अक्टूबर का प्रथम सप्ताह उपयुक्त होता है। यदि इस समय अधिक तापमान हो तो बुवाई थोड़ी देर से की जा सकती है। नवम्बर के प्रथम सप्ताह के पूर्व ही बुवाई का कार्य पूर्ण हो जाना चाहिए।

बीजोपचार : सौंफ फसल को मृदा एवं बीज जनित फफूंदी रोगों से बचाने के लिए थायरम + बाविस्टीन के 3 ग्राम सम मिश्रण से बीज की बुवाई के पूर्व प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें।

बुवाई का तरीका : सौंफ की बुवाई तीन प्रकार से की जाती है।

1. **छिटकवां विधि :** तैयारी क्यारियों में बीज को छिटककर बोया जाता है। इस विधि से कम समय में अधिक क्षेत्र की बुवाई की जा सकती है। परन्तु यह विधि अवैज्ञानिक है परिणामस्वरूप कम उपज मिलती है।
2. **कतारों में बुवाई :** कतारों में बीज की बुवाई 40 से 60 सेमी दूरी पर की जाती है एवं बीज की बुवाई करने के बाद दंतारी की मदद से बीज को मिट्टी से ढक दिया जाता है। बीज बुवाई के समय इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि बीज अधिक गहराई पर न जाये।
3. **पंक्तियों में रोपाई :** नर्सरी में बीज की बुवाई करके पहले पौध तैयार कर ली जाती है। तद्पश्चात् पौधों को 45 से 60 सेमी की दूरी पर रोपाई की जाती है। रोपाई का कार्य सायंकाल के समय करना उचति होता है। इस विधि का प्रयोग राजस्थान एवं गुजरात में अधिक होता है।

सिंचाई एवंज ल निकास :

बुवाई एवं रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है अतः हल्की सिंचाई अवश्य करें। सौंफ के अंकुरण में लगभग 7 से 14 दिन का समय लगता है। यदि इस अवस्था में नमी का अभाव हो तो एक हल्की सिंचाई करें ताकि अंकुरण आसानी से भूमि के बाहर निकल आये। उक्त दो सिंचाइयों के बाद फसल की अवस्था एवं मौसम के अनुसार 10 से 15 दिन के अंतराल पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। छत्रकों के दानों के बनते समय खेत में नमी की कमी होने पर उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है अतः इस अवस्था में नमी की कमी न हो इस बात का विशेष ध्यान रखें।

डहेलिया की खेती

डॉ0 वी. एम. प्रसाद
प्रवक्ता एवं विभागाध्यक्ष
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

साधना स्वस्तिका
एम. एस. सी. छात्रा
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

मौसमी फूलों में डहेलिया अपने अपूर्व सौन्दर्य एवं रूप–रंग के कारण उद्यान में अपनी ओर लोगों का ध्यान खींच लेता है। अपनी अलग आकर्षक अंदाज के कारण डहेलिया पुष्प–प्रेमियों के बीच महत्वपूर्ण स्थान रखता है। कोई भी बाग–बगीचा डहेलिया के बिना पूर्ण नहीं कहला सकता। अतः प्रत्येक पुष्प वाटिका को सुन्दर व आकर्षक बनाने के लिए डहेलिया को लगाना जरूरी समझा जाता है।

डहेलिया फूल की उत्पत्ति मैक्सिकों में हुई थी। स्वीडेन के वनस्पतिशास्त्री एंड्रिस गुस्तव डहल के नाम पर इसका नाम डहेलिया रखा गया। डहेलिया का वैज्ञानिक नाम डहेलिया बेरीबेलिस है और यह कम्पीजिटी कुल का पौधा है। भारत में हम इसके फूलों को सालों भर ले सकते है। भारत में भी विश्वस्तरीय गुणवत्ता वाले फूल व इसके ट्यूबर का कम लागत पर उत्पादन संभव है। इसकी पैदावार बढ़ाकर हम काफी विदेशी मुद्रा अर्जित कर सकते है।

उपयोग :–डहेलिया को प्रमुखता से प्रर्दशनी के लिए पुष्प उद्यानों में तथा घरेलू सजावट के लिए उपयोग में लाते है। डहेलिया के कंद, कंदों के टुकड़े, बीज एवं कट फ्लावर सभी हिस्से व्यावसायिक रूप से काफी महत्वपूर्ण हैं। भारतीय मौसम में ''जायंट'' नामक किस्में प्रर्दशनी के लिए सबसे उपयुक्त पायी गई है। इस विशेष प्रजाति की पूर्ण विकसित फूलों की लंबाई–चौड़ाई लगभग 25.4 सेंमी0 तक होती है। बौना किस्म के डहेलिया को विशेषकर क्यारियों एवं बार्डर पर प्रमुखता से लगाते है, क्योंकि इसमें डंडों के सहारे की जरूरत नहीं पड़ती है।

वर्गीकरण :– डहेलिया के फूलों में पाई जाने वाली विभिन्नता के आधार पर इसे दस वर्गो में विभाजित किया गया है जो इस प्रकार है–वाटरलिली, एनिमोन, कालरेट, फिमब्रीएट, डेकोरेटिव, बॉल, पामपॉन, कैक्टस, सेमी कैक्अस एवं अन्य प्रकार।

डहेलिया की डेकोरेटिव प्रजाति के पुष्पों की पंखुड़ियाँ बहुत सघन होती है तथा एक दूसरे पर छायी सी प्रतीत होती है। कैक्टस प्रजाति के पुष्पों की पंखुड़ियाँ कम सघन होती है तथा नुकीली एवं मुड़ी हुई होती है। पामपॉन प्रजाति अपने छोटे आकार के कारण अधिक प्रयोग में लाई जाती है।

पौधों को क्यारियों में लगाते समय रंगों की विविधता का भी ध्यान रखना चाहिए। जैसे लाल के पास पीला और गहरे लाल के पास सफेद एवं सफेद के पास बैंगनी लगाते है। इससे क्यारियाँ बहुत ही आर्कषक लगती है।

किस्में :–

- **डेकोरेटिव बड़ा**–एमरैन्थ, अमष्ता डिग्निटी, मास्टरपीस, क्रॉयडॉन वाइट, क्रॉयडॉन मास्टरपीस, नस्ट्रेषियम, लिबरेटर।
- **मध्यम**– हाउस ऑफ ऑरेन्ज, पीस।
- **छोटा**– इडेनवर्ग, मेरी रिचार्ड, ट्रेडी।
- **मिनिएचर**–अरेबियन नाइट, डोरिश ड्यूक, लवली लुकर, लिटिल मेरमेड।
- **कैक्टस बड़ा**–अर्बक्वीन, एल्वर्ट, द क्लोनल, रेडियो।
- **मध्यम**–इक्लिप्स, पोलर ब्यूटी, कानिवल, ब्यूडेलेयर।
- **छोटा**– प्रेसरेंस, पिन्निक्ल, ग्रेस।
- **पेमपोम बड़ा**–जेन लिस्टर, एक्कोट, किंडी।
- **मध्यम**–चार्रमीस, बोनी, लिटिल डेविड।
- **छोटा**–ग्लो, यल्लो जेम, दोरिया।

भारतीय किस्में :–

- स्वामी विद्यानन्द
- ज्योत्सना
- लार्ड बुद्धा
- भिक्कुम मदर
- स्वामी लोकेष्वरानंद
- डॉ बी0पी0 पाल
- ब्रोदर सग्पिलीसियस

प्रर्दशनी के लिए डहेलिया के ग्रुप इस प्रकार है :– वाटर लिली, एनिमोन फ्लावर क्लोरेट झालरदार, सजावटी, फूटना, कैक्टस अर्द्धकैक्टस, विधि कैक्टस

प्रवर्ध्धन विधि :– डहेलिया बहुवार्षिक पौधा है। अतः इसको बीज के अलावे कंदों द्वारा भी प्रवर्धित किया जाता है। परन्तु आजकल कटिंग (कत्तेन) द्वारा प्रवर्धन ही ज्यादा प्रचति है, जिससे अच्छे गुणों वाले फूल मिलते है।

कंदों से प्रसारण करते समय इसे कवकनाशी दवा, जेसे–कैप्टान 0-2% (एक लीटर पानी में 2 ग्राम) या वेविस्टीन 0-2% (एक लीटर पानी में 2 ग्राम दवा के घोल) से उपचारित कर लगाना चाहिए। कंदो से निकली हरी शाखाओं, जिसकी लंबाई करीब 7.5–10 से.मी0 हो की कर्त्तन तैयार करते हैं। इसके लिए तेजधार वाले चाकू या ब्लेड का इस्तेमाल करते है। कर्त्तन को जड़ वृद्धि–सहायक हार्मोन सेरेडिक्स बी या रूटेक्स से उपचारित करके गमलों या ऊँची क्यारियों में सड़ी पत्ती एवं मोटी बालू के मिश्रण में लगाकर रखते है। गमले एवं क्यारियाँ अर्द्ध छायादार स्थानों पर होने चाहिए। इनकी नमी बनाए रखने के लिए समय–समय पर पानी का छिड़काव करते रहना चाहिए। कर्त्तन से जड़ों के निकलने में लगभग दो हफ्ते का समय लग जाता है। जड़ों के निकलने के उपरान्त पौधों को सावधानीपूर्वक धूपदार स्थानों में रखना चाहिए।

डहेलिया को किसी प्रकार की मिट्टी में लगाया जा सकता हैं। किन्तु, यदि मिट्टी उदासीन (न अम्लीय, न क्षारीय) हो तो अच्छा होगा। थोड़ी अम्लीय मिट्टी भी डहेलिया के लिए अच्छी होती है। पौधों को लगाने का स्थान खुला होना चाहिए एवं सूर्य की रोषनी उचित मात्रा में मिलनी चाहिए। छाया में लगाने पर पौधा लंबा एवं कमजोर हो जाता है। डहेलिया की जड़े अधिक गहराई तक नहीं जाती है। अतः इसके लिए लगभग 45 सेंमी0 तक की गहरी खुदाई उपयुक्त होती है।

मैदानी क्षेत्रों में कंदों को बरसात के अंत में लगाते है। डहेलिया को उसके आकार एवं गर्ग के आधार पर 15 से0मी0 की गहराई एवं 30–90 से0मी0 की दूरी पर लगाते है। बड़ी डेकोरेटिक प्रजाति की तुलना में, क्यारियों में लगाये जाने वाले छोटे डहेलिया के लिए कम स्थान की आवश्यकता होती है।

खाद डालना :– डहेलिया के लिए 4 किलो गोबर या पत्नी की सड़ी हुई खाद प्रति वर्ग मीटर की दर से देनी चाहिए। यह सिर्फ बलुआही मिट्टी को छोड़कर सभी प्रकार की मिट्टी के लिए पूर्ण उपयोगी है। लॉन की छटाई से प्राप्त घास का कम्पोस्ट भी बहुत उपयुक्त होता है। इसके अतिरिक्त हड्डी की राख भी प्रति पौधा एक मुट्ठी दी जाती हैं अधिक मात्रा में यूरिया खाद देने पर वह कंदों की गुणवत्ता को प्रभावित करती है। सुन्दर और आकर्शक डहेलिया प्राप्त करने के लिए सरसो, नीम अथवा करंज की सड़ी हुई खल्ली के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

वृद्धि रोकना एवं पतला करना :– शाखाओं की अनावश्यक वृद्धि को रोकना चाहिए तथा अनावश्यक शाखाओं की छंटाई करनी चाहिए। जब पौधे लगभग 25–30 सेमी0 लम्बाई के हो जाते है तथा 4–6 जोड़ी

पत्तियाँ आ जाती है, तब पौधे के शीर्ष भाग को तोड़कर हटा दिया जाता है, सिर्फ कमजोर व तुरन्त के लगाए हुए पौधो को छोड़कर। पौधों की ऊपरी वृद्धि को रोकने का मुख्य उद्देश्य बगल वाली शाखाओं को बढ़ाना, पौधों को झाड़ी का रूप देना तथा फूलों का आकार बढ़ाना होता है। ये क्रियाएं डहेलिया की बड़ी प्रजातियाँ जैसे–डेकोरेटिव एवं कैक्टस के लिए उपयुक्त होती है। इस प्रक्रिया द्वारा फूलों के खिलने के समय को भी नियंत्रित किया जाता है। बगल की शाखाएँ जब तक 10–15 से0मी0 की न हो जाएँ तब तक उसे नहीं तोड़ना चाहिए। ये सभी क्रियाएँ अच्छी षाखाओं को बचाये रखने के लिए दी जाती है।

जब पौधों को सहारा देना :– जब डहेलिया के पौधों की अच्छी वृद्धि होने लगती है तब उसे सहारा देने के लिए डंडियों से बाँध दिया जाता है। इसके लिए बॉस की लकड़ी या लोहे की छड़ का इस्तेमाल करते है। पौधों की सुतली की सहायता से थोड़ा ढीला बांधते है।

कलियाँ निकालना :– कलियों को निकालने का मुख्य उद्देश्य अच्छी गुणवत्ता वाला फूल प्राप्त करना है। डहेलिया में सामान्यतः एक शाखा में लगभग तीन कलियाँ होती है। कंद्र वाली मुखय कली को छोड़कर मटर के आकार वाली अन्य दो कलियों को तोड़कर फेंक दिया जाता है। अगर मुख्य कली किसी कारणवश टूट जाए अथवा खराब हो जाए तब बलग वाली शाखाओं की कलियों को बढ़ाया जाता है। सभी कलियों को एक ही बार न तोड़कर क्रम से तोड़ना चाहिए।

सिंचाई :– डहेलिया को कम अतंराल पर थोड़ा–थोड़ा पानी न देकर लंबे अंतराल के बाद ज्यादा पानी देने की आवश्यकता पड़ती है। सिचाई की सही आवश्यकता एवं उचित अंतराल मिट्टी एव मौसम पर निर्भर करती है। वैसे पानी लगभग 5–7 दिनों के अंतराल पर ही देना चाहिए। छोटे एवं नये पौधों को कम अंतराल पर पानी की अधिक आवश्यकता होती है।

गमलों में लगाना :– डहेलिया को कम अतंराल पर थोड़ा–थोड़ा पानी न देकर लंबे अंतराल के बाद ज्यादा पानी देने की आवश्यकता पड़ती है। सिंचाई की सही आवश्यकता एवं उचित अंतराल मिट्टी एवं मौसम पर निर्भर करती है। वैसे पानी लगभग 5–7 दिनों के अंतराल पर ही देना चाहिए। छोटे एवं नये पौधों को कम अंतराल पर पानी की अधिक आवश्यकता होती है।

गमलों में लगाना :– गमलों में डहेलिया को सफलतापूर्व उगाना, क्यारियों में उगाने से कोई विषेश भिन्न नहीं होता है। गमले में लगाने के लिए प्रति गमला एक भाग बगीचे की मिट्टी, एक भाग बालू एक भाग पत्ती की सड़ी खाद, एक भाग गोबर की सही खाद तथा (भाग लकड़ी की राख व 2 चम्मच हड्डी चूर्ण का मिश्रण भरा जाता है। बड़े आकार के डहेलिया के लिए 25–30 सेमी0 व्यास वाला गमला लिया जाता हैं अतिरिक्त सिंचाई की आवश्यकता गमले में अधिक होती है। द्रवित खाद (गोबर की सड़ी तरल खाद) का उपयोग भी अच्छा फूल आने के लिए किया जाता है।

पाला :– पौधों को पाले से बचाने के लिए परगोला या बड़े पेड़ की छाया में इस प्रकार सुरक्षित रखा जाता है जिससे कि सुबह की धूप पौधों को सीधा मिल सके।

कंदों को निकालना एवं संग्रहण :– जब फूल खिलना समाप्त जो जाए तथा पत्तियाँ पीली पड़ने लगे तब पौधों को जमीन से 15–20 सेमी0 ऊपर से काट देते हैं। फिर बगीचे वाली खुरपी की सहायता से कंदों को इस प्रकार से निकाला जाता है कि वह कहीं से कट नहीं पाये। सिर्फ पूर्ण रूप से परिपक्त कंदों को ही निकालना चाहिए।

कंदों को मिट्टी से निकालने के बाद अच्छी तरह से साफ पर हल्की धूप या छायादार स्थानों पर रखकर सुखाना चाहिए। इसके उपरान्त इसे रोगर या सल्फर धूल से उपचारित कर ठंडे हवादार स्थानों पर बालू वाली तहो में डालकर रखा जाता है। कंदों को गर्मी से होने वाली सिकुड़न से बचाने के लिए समय–समय पर पानी का छिड़काव करते रहना चाहिए। कंदो के संग्रहण का आदर्श तापमान 4–7^{0} सेंटीग्रेड होता है।

अगर कंदों को गमले में ही छोड़ना हो, तो उसके ऊपरी भाग को काटकार, गमले की किसी छायादर स्थान पर या बड़े पेड़ या छाया में रखना चाहिए। गमले में पानी नहीं जमने देना चाहिए अन्यथा कंद सड़ जाऐंगे। वर्षो में गमलों को तिरछा रखा जाता है। जिससे कि ज्यादा पानी बह जाए। वर्ष में बढ़ने वाली शाखाओं को सितम्बर माह तक तोड़ने रहना चाहिए। इसके बाद ही तैयारी शाखाओं की पुनः कर्त्तन के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

शेष पृष्ठ सं० 25--पर

मूंगफली का दूध आधारित फरमेंटेड दही

नेहा सिंह
शोध छात्रा
वार्नर कॉलेज ऑफ डेयरी प्रौद्योगिकी
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

प्रो0 डी. के. थॉम्पिकनसन
प्रोफेसर एमेरिटस
वार्नर कॉलेज ऑफ डेयरी प्रौद्योगिकी
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

प्रो0 (डॉ0) जॉन डेविड
प्रवक्ता
वार्नर कॉलेज ऑफ डेयरी प्रौद्योगिकी
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

विभिन्न संस्कृतियों में सदियों से पौधों के दूध का सेवन किया जाता है, एक नियमित पेय के रूप में और दूसरा डेयरी दूध के विकल्प के रूप में। सबसे लोकप्रिय किस्मों में सोया दूध, मूंगफली का दूध, बादाम का दूध, चावल का दूध और नारियल का दूध होता है। प्रोटीन सामग्री भिन्न होती है इसमें लैक्टोज या कोलेस्ट्रॉल शामिल नहीं है। आमतौर पर अतिरिक्त कैल्शियम और विटामिन, विशेष रूप से बी12 के साथ फॉर्टफकेशन करके बेचा जाता है। संयंत्र दूध लेने के कई कारण हैंरू नैतिक (पशु कल्याण), पर्यावरणीय, स्वास्थ्य, लैक्टोज असहिष्णुता, दूध एलर्जी और फेनीलकेटनुरियाय शाकाहार और ओवो–शाकाहारय धार्मिक कारणों और सरल स्वाद वरीयता। संयंत्र दूध उन देशों के लिए एक वरदान के रूप में सिद्ध हो सकता, जहां पर दूध की आपूर्ति अपर्याप्त है। मूंगफली का प्रमुख स्रोत खाद्य तेल और प्रोटीन मील है और इसे मानव और पशुओं के पोषण में अत्यधिक मूल्यवान माना जाता है। मूंगफली दही, मूंगफली दूध के साथ तैयार किया जाता है। मूंगफली का दूध और इसके उत्पादों में उच्च मात्रा में प्रोटीन, खनिज और आवश्यक फैटी एसिड जैसे लिनोलिक और ओलिक एसिड पाये जाते है जो की युवा और वृद्ध लोगों के लिए अत्यंत लाभकारी हैं। वेनिला और स्ट्रॉबेरी के साथ सुगंधित मूंगफली के दूध से तैयार दही का स्वाद वाणिज्यिक पशु से लगभग समान होता है और यह एक अच्छा विकल्प हो सकता है खासकर जब लागत को ध्यान में रखा जाता है।

सामग्री

मूंगफली दही मूंगफली दूध, दही बैक्टीरिया (*Lactobacillus delbrueckii* subsp. *bulgaricus and Streptococcus salivarius* subsp. *thermophilus*) का उपयोग करके तैयार किया जाता है, कभी–कभी फ्रक्टोज, ग्लूकोज या चीनी जैसे स्वीटनर्स भी मिलाये जाते हैं।

मूंगफली का दूध तैयार करने की विधि :–

मूंगफली का दूध तैयार करने के लिए, सबसे पहले मूंगफली का बीज 130 डिग्री सेल्सियस पर एक ओवन में 20 मिनट के लिए भुना जाता है। फिर भुनी मूंगफली का छिलका निकाल कर उसे तौला जाता है और कम से कम 12 घंटे के लिए 0.5 ग्राम /100 मिलीलीटर सोडियम बिकारबोनिट ($NaHCO_3$) सॉल्यूशन में भिगोया जाता है। मूंगफली को फिर साफ पानी से धोया जाता है और फिर 1:5 [मूँगफली (ग्राम): पानी (एमएल), के अनुपात में पानी डालकर स्टेनलेस स्टील के ब्लेंडर में बारीक पेस्ट तैयार कर लें। इसके परिणामस्वरूप पेस्ट को डबल–स्तरीय मलमल के कपड़े के माध्यम से मूंगफली का दूध पाने के लिए छाना जाता है। मूंगफली के दूध को 10 मिनट तक 82 डिग्री सेल्सियस पर पाश्चराइज्ड किया जाता है और फिर 4 डिग्री सेल्सियस ठंडा किया जाता है।

मूंगफली दही तैयार करने की विधि :–

मूंगफली का दूध 42 ± 5 डिग्री सेल्सियस तक गरम किया जाता है और फिर सूक्रोज (6% w/v), स्किम मिल्क पाउडर (4% w/v) और कार्बोक्सी मिथाइल सेलूलोज

(1-5% w/v) के साथ मिलाकर, होमोजेनाइज (2500 चेप) किया जाता है। होमोजेनाइज मूंगफली के दूध को 5 मिनट के लिए उबालकर ठंडा किया जाता है और फिर जामन (2-5% w/v) डाल कर उसे 37±2 डिग्री सेल्सियस तापमान पर रख दे। लगभग 5–6 घंटे बाद जब दही फर्म हो जाता है तो दही को ठंडा करें।

मूंगफली का रोस्टिंग (130 डिग्री सेल्सियस, 20 मिनट)

↓

मूंगफली को 0.5ः सोडियम बिकारबोनिट सॉल्यूशन में 12 घंटे के लिए भिगोये

↓

अतिरिक्त पानी को हटा दें

↓

साफ पानी से धो लें

↓

मूंगफली और पानी 1:5 के अनुपात में डालकर ब्लेंडर में बारीक पेस्ट तैयार कर लें

↓

मलमल के कपड़े द्वारा दूध को छाने

↓

82 डिग्री सेल्सियस पर 10 मिनट के लिए पाश्चराइज्ड करें

↓

ठंडा करें (42 डिग्री सेल्सियस)

↓

सूक्रोज (6%), स्किम मिल्क पाउडर (4%) और कार्बोक्सी मिथाइल सेलूलोज (1-5%) मिलायें

↓

मूंगफली के दूध को होमोजेनाइज करें

↓

जामन (2-5%) डाल कर उसे 37±2 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 5–6 घंटे रख दे

↓

दही सेट होने पर ठंडा करें

↓

मूंगफली दही को बनाने के लिए योजनाबद्ध आरेख

बॉकला एवं पंखिया सेम की उन्नत खेती

राधेलाल देवांगन
शोध छात्र
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

डॉ0 विजय बहादुर
सह–प्रवक्ता
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

सतीश शाखा
शोध छात्र
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

बॉकला की उन्नत खेती

जाड़े के मौसम में यह दलहनी सब्जी के रुप में काफी महत्वपूर्ण हैं, इसकी मुलायम हरी फलियों को सब्जी के रुप में प्रयोग किया जाता हैं, जबकि सूखे दानों का दाल के लिए प्रयोग किया जाता हैं। पशुओं के लिए यह एक आदर्श चारा माना जाता हैं।

बॉकला की हरी फलियों में पाये जाने वाले पोषक तत्व (प्रति 100 ग्राम खाने योग्य भाग में)

पोषक तत्व	मात्रा	पोषक तत्व	मात्रा
नमी	85.04 ग्राम	प्रोटीन	4.5 ग्राम
वसा	0.1 ग्राम	खनिज लवण	0.8 ग्राम
रेशा	2.0 ग्राम	कार्बोहाइड्रेट	7.2 ग्राम
ऊर्जा	48 किलोकैलोरी	कैल्सियम	50 मिलीग्राम
फास्फोरस	64.0 मिलीग्राम	आयरन	1.4 मिलीग्राम
कैरोटिन	9 माइक्रोग्राम	थाइमिन	0.08 मिलीग्राम
रिबोफलेविन	–	नियासिन	0.8 मिलीग्राम
फोलिक अम्ल	–	विटामिन सी	12 मिलीग्राम

(स्त्रोतः– डयूक 1981)

बॉकला के हरे फलियों एवं दानों को सब्जी के लिए तथा डिब्बाबंदी के लिए प्रयोग किया जाता हैं, जापान में बॉकला को सोरांमेम बीन के नाम से जानते है और वृहद् पैमाने पर अचार बनाने के लिए प्रयोग होता है।

उन्नतशील किस्म :–

छोटी फलियो वाली :– हवाइट विंडसर, इम्पिरियल ग्रीन विंडसर, ज्वाइण्ट कोट।

लम्बी फलियो वाली :– इम्पिरियल व्हाइट लांग पाड, मास्टरपीस, ग्रीन लांग पाड।

जलवायु :–

बॉकला की वृद्धि एवं विकास के लिए ठण्डी जलवायु की आवश्यकता होती है, इस फसल में पाला सहन करने की अद्भूत क्षमता (4 डिग्री सेल्सियस से कम तापमान) होती है। बीजों का अंकुरण (0 डिग्री सेल्सियस) तापमान

पर होता पाया गया हैं। उचित अंकुरण के लिए 22 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त होती है, औसत वर्षद्धि एवं विकास के लिए 18– 27 डिग्री सेल्सियस तापमान सबसे उपयुक्त होता हैं।

भूमि एवं भूमि की तैयारी :– बॉकला की खेती किसी भी प्रकार की मृदा में सफलतापूर्वक की जा सकती है, लेकिन उचित जल–निकास वाली जीवांशयुक्त भारी मिट्टी जिसका पी.एच. 6–7 के बीच हो, इसकी खेती के लिए उपयुक्त है।

खेत तैयार करने के लिए पहले खेत की पलेवा करनी चाहिए। खेत मे उपयुक्त नमी आने पर गहरी जुताई डिस्क हैरो से व 2–3 जुताई कल्टीवेटर से करना चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद खेत में पाटा अवश्य लगाना चाहिए, जिससे मिट्टी भुर–भुरी हो जाये।

बीज की बुवाई :–

मैदानी क्षेत्रों में :– सितम्बर– अक्टूबर,

पहाडी क्षेत्रों में :– फरवरी के अंतिम सप्ताह– मध्य मार्च,

अन्तरण :–

75X15 सेण्टीमीटर

बीज दर :–

छोटी फलियों वाली :– 70–80 किग्रा./हेक्टेयर,

लम्बी फलियों वाली :– 90–100 किग्रा./हेक्टेयर,

खाद एवं उर्वरक :– बॉकला की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए खेत की तैयारी के समय 10–15 टन सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट को भलि–भांति खेत में मिला देनी चाहिए। इसके अलावा तत्व के रुप में 15–20 किलो नत्रजन, 50–60 किलोग्राम फास्फोरस तथा 40–50 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से आवश्यकता पडती है। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस की पूरी मात्रा बीज के बुवाई के समय देना चाहिए। शेष नत्रजन की आधी मात्रा पौध वृद्धि एवं पुष्पन पूर्व देना चाहिए, इससे फलियों का विकास तेजी से होता है।

सिंचाई :– बॉकला की फसल से अधिक गुणवत्ता युक्त उपज प्राप्त करने के हेतु खेत में पर्याप्त नमी का होना आवश्यक है, शरदकालीन फसल होने के कारण 10–12 दिन के अंतराल पर सिंचाई की आवश्यकता पडती है।

खरपतवार नियंत्रण :– इस फसल में खरपतवार 30–40 दिनों तक ज्यादा प्रभावित करते है, अतः नियमित निराई गुडाई करने से नियंत्रण किया जा सकता है, रासायनिक विधि से खरपतवार नियंत्रण के लिए पेन्डामेथिलिन नामक रसायन की 3 मिली. मात्रा को प्रति लीटर पानी मे घोलकर बीज बुवाई के 72 घण्टे के अंदर प्रयोग करना चाहिए।

तुडाई :– बॉकला की हरी व मुलायम फलियों की तुडाई करनी चाहिए। तुडाई करते समय जांच लेना चाहिए कि दाने कोमल व फलियों मे रेशा विकसित न हुआ हो। यह अवस्था किस्म के अनुसार मैदानी क्षेत्रों मे बीज बुवाई के 90–100 दिन में तथा पहाडी क्षेत्रों में 120–140 दिन मे आ जाती है।

उपज :– हरी फलियों की औसत उपज 10–11 टन प्रति हेक्टेयर होती है, दाने की उपज 1.2–1.5 टन प्रति हेक्टेयर होती है।

पंखिया सेम की उन्नत खेती

दलहनी फसलों में पंखिया सेम ही एक चमत्कारी गुणों वाला पौंधा हैं, जो अपने प्रत्येक अंग से किसी न किसी रुप में मनुष्य, पशु एवं वातावरण को लाभ पहुंचाता है। पंखिया सेम का नाम उसकी फलियो की बाह्य संरचना के आधार पर रखा गया है, जिसकी चार कोनों पर पंखदार धारिया पूरी लम्बाई तक जाती है इसके अलावा इसे गोवाबीन, चओधारी फोली, मनीला बीन, एस्पेरेगस बीन, विंग्ड पी, प्रिन्सेज बीन आदि नामों से भी जाना जाता हैं।

पंखिया सेम एक बहुवर्षीय लता हैं, जिसे एकवर्षीय लता के रुप में उगाया जाता हैं। इसका उपयोग अपरिपक्व कोमल अवस्था में सब्जी के रुप में किया जाता हैं, कंदिल जडें, पत्तियों, टहनियों, पुष्पों तथा बीजों का उपयोग विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थो को तैयार करने के लिए किया जाता है।

पंखिया सेम के विभिन्न भागों के पोषण मूल्य (प्रति 100 ग्राम खाने योग्य भाग में)

घटक	कोमल पत्तियां	पौधे के भाग		पत्तियां	फूल
		बीज जड़	कंद		
नमी	76-92	7-25	70-90	64-78	70-84
प्रोटीन	2-3	38-40	18-20	5-7.6	5.7-6
वसा	0.2-0.3	15-20	0.5-1.1	0.7-1.1	0.4-0.9
कार्बोहाइड्रेट	3.1- 3.8	24-42	27.2-30.5	3-8.5	-
रेशा	1.2-2.6	5-12.5	17-19	-	-
राख	0.5-2	3.3-4.3	1-2	-	-

पंखिया सेम के उपयोग :–

1. औषधीय रुप में भी इनकी पत्तियों का प्रयोग चेचक के इलाज के लिए एक कम्पाउण्ड लोसन तैयार किया जाता है।
2. पंखिया सेम का प्रयोग चावल एवं विभिन्न प्रकार के व्यंजनों के रंगने तथा केक पेस्ट्री आदि में होता है।
3. तले फूल मशरुम की तरह स्वाद देते हैं, इसके अलावा इन्हें पकौडें, आमलेट एवं अन्य खाद्य पकवानों मे भी प्रयोग किया जाता हैं।

उन्नतशील किस्में :–

पी.टी.–62, पी.टी.–16, पी.टी.–49, पी.टी.–2,

जलवायु :– यह उष्ण कटिबंधीय जलवायु की फसल हैं, गर्म एवं आर्द्र जलवायु मे यह अच्छी तरह पैदा होती हैं। पंखिया सेम के लिए उपयुक्त तापक्रम 15.4-27.7 डिग्री सेण्टीग्रेड होता हैं। यह अधिक गर्मी तो सहन कर लेती हैं, किन्तु पाला सहन नहीं कर पाती हैं।

भूमि :– जल निकास वाली भूमि ,बुलई से चिकनी मिट्टी मे उत्पन्न हो सकती हैं, पी.एच. मान 4.3 से 8.3 हो सकता हैं, क्षारीय भूमि उपयुक्त नही होती है।

बीज बुवाई का समय :– जून–जुलाई ,

अन्तरण :– 90-120X45-60 सेण्टीमीटर,

बीजदर :– 15–20 किग्रा./हेक्टेयर,

खाद एवं उर्वरक :– पंखिया सेम में प्रति हेक्टेयर 10 टन अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद खेत की अंतिम जुताई के समय मिला दिया जाये। इस फसल को नाइट्रोजन 40 किलों, फास्फोरस 80 किलो,एवं पोटाश 40 किलो/ हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा और नाइट्रोजन की आधी मात्रा बुवाई करते समय देना चाहिए, नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा पुष्पन के समय दी जाती हैं।

सिंचाई :– पौधों की जडें जब तक गहराई तक नहीं जाती हैं, सिंचाई की नियमित आवश्यकता होती हैं, वर्षा ऋतु में भी यदि वर्षा नियमित नही होती हैं, तो सिंचाई करना आवश्यक हो जाता हैं।

खरपतवार नियंत्रण :– प्रारम्भ के एक महीने में खरपतवार के नियंत्रण के लिए निराई– गुडाई करते है, रासायनिक विधि से खरपतवार नियंत्रण के लिए पेन्डीमेथिलीन नामक खरपतवारनाशी की 3.0 मिलीलीटर

मात्रा को प्रति लीटर पानी मे घोलकर बीज बुवाई के बाद तथा बीज जमाव पूर्व प्रयोग किया जा सकता है।

पौधों को सहारा देना :– लताओं की वृद्धि के लिए सहारे की आवश्यकता होती हैं, प्रायः लताओं को 1.5 मीटर ऊचे बांस, तार के पंडाल पर फैला देते है।

फलों की तुडाई :– साधारण रुप से 50–90 दिनों में पुष्प आने लगते है तथा इसके 15 दिन बाद फलियॉं निकलने लगती है, अगर हरी फलियों की समय पर तुडाई होती रहे तो लगभग 8 महीने तक फूल आते रहेगे।

उपजः– पंखिया सेम की हरी फलियों की औसत उपज 25–35 टन / हेक्टेयर होती हैं, बीज का औसत उत्पादन 2–4 टन और कंद का 8–11 टन / हेक्टेयर होता है।

पृष्ठ सं० 19--का शेष

कीड़े एवं बीमारियाँ :– डहेलिया में बहुत सारे कीड़ों एवं बीमारियों का प्रकोप होता है। कुछ मुख्य कीड़े एवं बीमारियाँ तथा उनकी रोकथाम के उपया निम्न है।

बीमारियाँ एवं उपचार व रोकथाम :–

(क) वायरस : डहेलिया में वायरस का बहुत ही घातक आक्रमण होता है। इस पर प्रायः तीन प्रकार के वायरस का प्रभाव पड़ता है। इसमे पत्तियों पर हल्की पीली, हरे रंग की छल्लेदार धारियाँ बन जाती है एवं पौधों की वृद्धि रूक जाती है। यह हरी मक्खी द्वारा फैलती है। अन्य प्रकार के वायरस काली मक्खी एवं लाही द्वारा फैलते है। अत्यधिक रोगग्रस्त स्थिति में पौधों एवं फूलों की वृद्धि रूक जाती है।

इससे बचने के लिए बीमारी रहित कंदों का इस्तेमाल करना चाहिए। तथा रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए।

(ख) चूर्णा फफूँदी : यह कवक द्वारा फैलती है। इसमें नयी पत्तियों एवं तनो पर गोल धारियाँ बन जाती है जो धीरे–धीरे पूरी पत्तियों पर फैल जाती है और इन पर सफेद चूर्ण जमा हो जाता है। इनकी रोकथाम के लिए सल्फर धूल कर 3 ग्राम/ली पानी में घोल बना कर छिड़काव करना चाहिए।

(ग) पत्ता एवं तना गलन : यह भी डहेलिया का एक मुख्य रोग है। इसमें पत्ती एवं तना गल जाता है। इससे बचने हेतु डहेलिया को हमेशा स्थान परिवर्तित कर लगना चाहिए, क्योंकि यह मिट्टी जनित रोग है। पौधों के बीच उचित दूरी तथा पानी की समुचित निकासी की व्यवस्था करनी चाहिए तथा रोग रहित कंदों का इस्तेमाल करना चाहिए। रासायनिक उपचारों में कंदों को वेनलेट के 2 ग्राम/ली पानी में बने घोल में 30 मिनट तक डुबायें। मिट्टी में बॉसीकाल के घोल को डालें। इसके साथ ही पौधों पर ब्लिटॉक्स 4 ग्राम/ली0 पानी में घोल कर या बोर्डो मिश्रण (5:4:50) का छिड़काव दो हफ्ते के अंतराल पर करें।

कीट एवं रोकथाम :–

डहेलिया में लगने वाले तीन कीट प्रमुख है :– लाही, थ्रिप्स एवं बोनाटोड

(क) लाही एवं थ्रिप्स : यह कीट कोमल पत्तियाँ, तनी एवं फूलों के रस चूसते रहते है तथा नीमेटोड जड़ो में चिपक कर उसके रस चूसते है जिससे पौधों की वृद्धि रूक जाती है।

लही के नियन्त्रण हेतु रोगर दवा का 2 मि0ली0/ली पानी में घोल बना कर छिड़काव करें।

थ्रिप्स की रोकथाम के लिए नुवाक्रान का 1.5 मि0ली0/ली0 पानी में घोल बना कर पत्तियों पर छिड़काव करें।

(ख) नीमेटोड : यह कीट कंद को खा कर सड़ा देता है। इसकी रोक्थाम के लिए फुराडान दवा का 500–600 ग्राम प्रति एकड़ की दर से मिट्टी में छिड़काव करना चाहिए।

प्याज का बीजोत्पादन कैसे करें

अनूप प्रताप सिंह
शोध छात्रा
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

डॉ0 विजय बहादुर
सह–प्रवक्ता
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्याज का हमारे देश में उगाई जाने वाली सब्जियों में एक महत्वपूर्ण स्थान है। यह एक महत्वपूर्ण शल्ककंद सब्जी फसल है। यह पोटेशियम, फास्फोरस, कैल्शियम तथा विटामिन सी का एक अच्छा श्रोत है। इसका बीजोत्पादन उष्ण कटिबन्धीय शीतोष्ण तथा समशीतोष्ण आदि विभिन्न जलवायु वाले क्षेत्रों में सम्भव है। पौधे की आरंभिक बढ़वार की अवस्था में व कंद बनना शुरू होने से पहले 13–21 डिग्री सेल्सियस तापमान तथा कंद बनना शुरू होने की अवस्था में 14–24 डिग्री सेल्सियस तापमान अनुकूल रहता है। बीज के पकने के समय अपेक्षाकृत सूखे व गर्म मौसम की आवश्यकता होती है।

उन्नत किस्में :–

रबी फसल के लिए उन्न्त प्रजातियाँ:–

लाल किस्में:–पूसा लाल, पूसा माद्यवि, पूसा रिद्धि, पूसा रतनार, अर्का निकेतन, एग्रीफाउंण्ड लाइट रैड, एन.एच.आर.डी.एफ.रैड।

सफेद किस्में:–पूसा व्हाइट फ्लैट, पूसा व्हाइट राउंड, एग्रीफाउंण्ड व्हाइट, एस. 48, पंजाब व्हाइट।

पीले रग की किस्में–अर्ली ग्रेनों

खरीफ फसल के लिए उन्नत प्रजातियाँ–एन–53, एग्रीफांउण्ड डार्क रैड

खेत का चयन :– प्याज बीज उत्पादन के लिए ऐसे खेत का चुनाव करना चाहिये जिसमें पिछले मौसम में प्याज या लहसुन की शल्क–कंद या बीज फसल ना उगाई गई हो। खेत की मिट्टी दोमट, बलुई दोमट या चिकनी दोमट तथा पी. एच. 6 से 7.5 होना चाहिये। खेत की मिट्टी में जीवांश पदार्थ प्रचुर मात्रा में तथा पानीं के निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

पृथक्करण दूरी :– शल्ककंद उत्पादन के दौरान दो किस्में के बीच में न्यूनतम 5 मीटर का फासला होना चाहिए। प्रमाणित बीज फसल उत्पादन के लिए न्यूनतम 400 मीटर की पृथक्करण दूरी तथा आधार बीज फसल के लिए यह पृथक्करण दूरी 1000 मीटर होनी चाहिए। प्याज एक पर–परागित फसल है जिसमें मधुमक्खियाँ तथा अन्य कीट परागण में मदद करते हैं अतः आनुवांशिक रूप से शुद्ध बीज उत्पादन के लिए निर्धारित न्यूनतम पृथक्करण दूरी का होना आवश्यक है।

सिंचाई प्रबंधन :– शल्क कंदों को बीजने के बाद सिंचाई करते हैं। बीज खेत में समय–समय पर सिंचाई करने की आवश्यकता होती है, विशेषकर पुष्पन तथा बीज विकास के समय खेत में उचित नमी बनाए रखना आवश्यक है।

खाद एवं उर्वरक :– शल्ककंद रोपण के लिए खेत तैयार करते समय 50 टन गोबर की सड़ी खाद, 240 किलोग्राम कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट या 60 किलोग्राम यूरिया, 150 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट तथा 80 किलोग्राम म्यूरेट आफ पोटाश तथा 10–12 किलोग्राम पी. एस. बी. कल्चर प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में

मिलाते हैं। इसके अतिरिक्त 35 किलोग्राम यूरिया शल्ककंद लगाने के 30 दिन बाद तथा 35 किलोग्राम यूरिया शल्ककंद लगाने के 45–50 दिन बाद छिड़काव द्वारा डालते हैं।

बीजोत्पादन विधि :– उत्तर भारत के मैदानी भागों में बीजोत्पादन की दो विभिन्न विधियाँ हैं।

1. **बीज से बीज तैयार करना :–** इस विधि में सीधा बीज से बीज तैयार किया जाता है। इसके अंतर्गत पौधशाला में बीज की बुवाई अगस्त माह में तथा पौध की रोपाई अक्टूबर में की जाती है। अप्रैल–मई में बीज की बुवाई अगस्त माह में तथा पौध की रोपाई अक्टूबर में की जाती है। अप्रैल–मई में बीज तैयार होता है। इस विधि में अपेक्षाकृत अधिक बीज की उपज होती है एवं बीज हेतु कंदों/गांठों के भंडारण तथा पुनः रोपण आदि का खर्चा भी बचता है। इस विधि में प्याज के बीज की जातीय शुद्धता बनाये रखना संभव नहीं है। क्योंकि इसमें कंदों के रंग, आकार आदि गुणों की परख नहीं की जा सकती।

2. **शल्क कंदों से बीज बनाना :–** प्याज के अच्छी गुणवत्ता वाले बीज उत्पादन हेतु अधिकतर इस विधि का उपयोग किया जाता है। इसके अंतर्गत दो विधियाँ आती है।

- **एक वर्षीय विधि–**इस विधि में खरीफ में उगाई जाने वाली प्रजातियाँ जैसे एन–53, एग्रीफाउंण्ड डार्क रैड आदि का बीज तैयार किया जाता है। इसमें जून माह में पौधें तैयार करते हैं तथा पौधे की रोपाई अगस्त में की जाती है। कंद नवम्बर–दिसम्बर माह में तैयार हो जाते है। कंदो की खुदाई के 15–20 दिन उपरान्त चुने हुए स्वस्थ कंदों के बीज खेत में लगाते हैं। पुष्प दंड जनवरी–फरवरी में निकलते हैं तथा बीज अप्रैल–मई में निकाला जाता है। इस विधि में लगभग एक वर्ष का समय लगता है।

- **द्विवर्षीय विधि :–** इस विधि में रबी प्याज की प्रजातियां जैसे पूसा रैड, पूसा माधवी, पूसा रिद्धि, पूसा व्हॉइट फ्लैट, पूसा व्हाइट राउंड, एस–48, एग्रीफाउंण्ड लाइट रैड, एन. एच. आर. डी. एफ. रैड आदि का बीज तैयार करते हैं। इसमें बीज अक्टूबर–नवंबर में बोया जाता है तथा पौधे की रोपाई दिसंबर से जनवरी के प्रथम पखवाड़े तक करते हैं। शल्ककंद अप्रैल–मई में तैयार हो जाते हैं। खुदाई के उपरान्त चुने हुए स्वस्थ शल्ककंदों को अक्टूबर तक भंडारण में रखते हैं। जिन्हें अक्टूबर–नवंबर में बीज उत्पादन हेतु खेत में लगाते हैं। बीज अप्रैल–मई में निकाला जाता है। इस विधि से बीज तैयार करने में लगभग डेढ़ वर्ष का समय लगता है। उत्तर भारत में बीज की अच्छी उपज एवं उच्च गुणवत्ता हेतु प्याज के बीज उत्पादन के लिए यह विधि अपनाई जाती है जिसका विवरण निम्न प्रकार है।

- **बीज से शल्ककंद तैयार करना :–** शल्ककंद उत्पादन हेतु पौधें तैयार करने के लिए बीज को 15–20 सेम., ऊँची उठी हुई क्यारियों में लगाया जाता है। एक हैक्टेयर क्षेत्र में रोपाई के लिए 3 मीटर लम्बी तथा 60 से.मी. चौड़े आकार लगभग 80–100 क्यारियाँ पौध उत्पादन हेतु पर्याप्त होती है। दो तीन जुताइयाँ करके खेत को समतल बनाकर क्यारियों व नालियों में बाँट देते है। 8–10 किलोग्राम बीज एक हैक्टेयर के लिए पर्याप्त रहता है। बीज को 5–6 सेमी. की दूरी पर कतारों में बोना चाहिए। बीजाई के बाद बीज को आधा सेमी. तक अच्छी तरह सड़ी तथा छनीं हुई गोबर की खाद से ढ़क देते हैं। 6–7 सप्ताह में पौध रोपाई हेतु तैयार हो जाती है। खरीफ फसल के लिए बीज मई–जून में बोया जाता है तथा पौध रोपण जुलाई–अगस्त में करते हैं। रबी फसल हेतु बीज अक्टूबर–नवम्बर में बोया जाता है। तथा पौध की रोपाई दिसंबर से जनवरी के प्रथम पखवाड़े तक करते हैं। पौध रोपण 15×10 सेमी. के अंतराल पर करते हैं। रोपाई के तुरंत बाद हल्की सिंचाई करते हैं। पौध रोपण के लिए खेत तैयार करते समय 50 टन गोबर की सड़ी खाद 240 किग्रा कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट या 60 किग्रा यूरिया 200 किग्रा सिंगल सुपर फास्फेट तथा 80 कि.ग्रा. म्यूरेट आफ पोटाश तथा 10–12 कि.ग्रा. पी.एस.बी. कल्चर प्रति हैक्टेयर की दर से मिट्टी में मिलाते हैं। इसके अतिरिक्त 35 किग्रा. यूरिया रोपण के 30 दिन बाद तथा 35 कि0ग्रा0 यूरिया पौध रोपण के 45–50 दिन बाद उथली निराई–गुड़ाई करते हैं और खरपतवार निकालते हैं। समय–समय पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करते हैं। साधारणतया जाड़े के मौसम में 10–15 दिन के अंतराल पर तथा गर्मियों में सिंचाई 7–8 दिन के अंतराल पर करते हैं। जिस समय शल्ककंद बन रहें हों मिट्टी में नमी की कमी नहीं होनी चाहिए।

शल्ककंदों की खुदाई व भंडारण :– पौध रोपण के लगभग 110–124 दिन दिन बाद शल्ककंद खुदाई के लिए तैयार हो जाते हैं। पौधों की 40 : पत्तियां सूखन के 8–10 दिन पश्चात शल्ककंदों की खुदाई करने से भंडारण में होने वाली हानि कम हो जाती है। पत्तों सहित खुदाई करके शल्ककंदों को कतारों में रखकर 5–7 दिन छाया में सुखाते हैं। पत्तों को गर्दन से 2–2.4 सेमी. छोड़कर काट देते हैं। भण्डारण में होने वाली हानि से बचने के लिए शल्ककंदों को सीधा धूप में नहीं सुखाना चाहिए तथा भीगने से बचाना चाहिए। मई में शल्ककंद को निकालने के बाद साफ करके अक्टूबर तक अच्छे हवादार भंडारगृह में रखते हैं। बोई गई किस्म से मेंल खाती अच्छी, एक रंग की, पतली गर्दन वाली, दोफाड़े रहित शल्ककंदों का भंडारण करते हैं। भंडारित किये गए कंदों की 15–20 दिन के अंतराल पर 2–3 बार छंटाई करते हैं तथा सड़े गले तथा रोग ग्रस्त कंदों को निकालते हैं।

शल्ककदों से बीज उत्पादन :– बीजोत्पादन हेतु रबी प्रजातियाँ के शल्ककंदों को नवंबर के प्रथम पखवाड़े में तथा खरीफ प्रजातियाँ के शल्ककंदों को मध्य दिसंबर तक लगाया जाना चाहिए। बोने के लिए चुनी गई किस्म के गुणों से मेल खाते शल्ककंदों को उनके रंग, आकार व रूप के आधार पर छांटते हैं। पूर्णतः स्वस्थ, एक रंग की, पतली गर्दन वाली, दोफाड़े रहित एवं 4.5–6.5 से. मी. व्यास तथा 60–70 ग्राम भार के शल्ककंदों को बीज उत्पादन हेतु रोपण के लिए चुनते है। चुने हुए कंदों के ऊपर एक चौथाई या एक तिहाई हिस्सा काटकर हटा देते हैं तथा काटे गए कंद के निचले हिस्से को 0.2% कार्बेडांजीम अथवा मैंकोजेब के घोल में 5–10 मिनट तक भिगोकर खेत में रोपाई करते हैं। कंदो को बगैर काटे या साबुत भी लगाया जाता है। उपचारित शल्ककंदों को अच्छी तरह तैयार किये गए खेत में समतल क्यारियों में 60×30 सेमी. की दूरी पर 6–7.4 सेमी. की गहराई पर लगाया जाता है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 सेमी. से कम होने पर फसल में मिट्टी चढ़ाने के कार्य में बाधा आती है। शल्ककन्दों की रोपाई हेतु 60 से.मी. के अंतर पर हल्की नालियां ट्रैक्टर चालित ड्रील द्वारा बनाई जा सकती हैं जिससे रोपाई में श्रमिक खर्च की लागत कम आती है। एक हैक्टेयर क्षेत्र में लगानें के लिए लगभग 25–30 क्विंटल शल्ककंदों की आवश्यकता होती है। खरीफ प्रजातियों के प्याज को लगानें से पहले पौटाशियम नाइट्रेट 1 प्रतिशत के घोल में 5 मिनट डुबोकर लगानें से अंकुरण में लाभ होता है।

सिंचाई प्रबंधन :– शल्ककंदों को बीजने के बाद सिंचाई करते हैं। बीज खेत में समय पर सिंचाई करने की आवश्यकता होती है विशेषकर पुष्पन तथा बीज विकास के समय खेत में उचित नमी बनाए रखना आवश्यक होता है। दिन के समय अथवा तेज हवा चलने की अवस्था में सिंचाई नहीं करनी चाहिए। टपक सिंचाई का उपयोग करने पर भी अच्छी बीज फसल प्राप्त होती है।

खाद एवं उर्वरक :– शल्ककंद रोपण के लिए खेत तैयार करते समय 50 टन गोबर की सड़ी खाद, 240 किग्रा. कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट या 60 कि.ग्रा. यूरिया, 140 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट तथा 80कि. ग्रा. म्यूरेट आफ पोटाश तथा 10–12 किग्रा. पी. एस. बी. कल्चर प्रति हैक्टेयर की दर से मिट्टी में मिलाते है। इसके बाद तथा 35 किग्रा. यूरिया शल्ककंद लगाने के 30 दिन बाद तथा 35 किग्रा. यूरिया शल्ककंद लगाने के 45–50 दिन बाद छिड़काव द्वारा डालते हैं।

बीजवृंतों की कटाई, गहाई व भंडारण :– कंदों की बुवाई के एक सप्ताह बाद अंकुरण आरम्भ हो जाता है तथा लगभग ढाई माह बाद फूल वाले डंठल बनने शुरू हो जाते हैं। पुष्प गुच्छ बनने के 6 सप्ताह के अंदर ही बीज पक जाता हैं बीजवष्तों का रंग जब मटमैला हो जाए एवं उनमें 10–15 प्रतिशत कैप्सूल के बीज बाहर दिखाई देने लगे तो बीजवृतों को कटाई योग्य समझना चाहिए। सभी बीजवृंत एक साथ नहीं पकते अतः उन्हीं बीजवृंतो को कटाई योग्य समझना चाहिए। सभी बीजवृंत एक साथ नहीं पकते अतः उन्हीं बीजवृंतो को काटना चाहिए जिनमें 10–15: काले बीज बाहर दिखाई देने लगे हों, 10–15 सेमी. लम्बे डंठल के साथ पुष्प गुच्छों को काटाना चाहिए। कटाई के बाद बीजवष्तों को तिरपाल या पक्के फर्श पर डंठल के साथ पुष्प गुच्छों को काटना चाहिए। कटाई के बाद बीजवृंतो को डंडों से पीटकर या ट्रैक्टर द्वारा गहाई करके बीजों को निकालते हैं। बीजों से बीजवृंत अवशेषों, तिनकों, डंठलों आदि को अलग कर लेते हैं। यांत्रिक प्रसंस्करण सुविधा ना होने की स्थिति में सफाई के लिए बीज को 2–3 मिनट तक

पानी में डुबोना चाहिए तथा नीचे बैठे हुए भारी बीजों को निधार कर सुखाना चाहिए। सुखाने के बाद बीज को फफूंदीनाशक दवा द्वारा उपचारित करना चहिए। साफ बीज को अगर टिन के डिब्बों, अल्युमिनियम फायल या मोटो प्लास्टिक के लिफाफे में भरना हो तो बीज को 5–6 प्रतिशत नमी तक सुखाना चाहिए। सुरक्षित भंडारण हेतु बीज को 18–20 डिग्री सेल्सियस तापक्रम तथा 30–40 प्रतिशत आपेक्षित आर्द्रता पर रखना चाहिए।

बीज उपज एवं मानक :– अच्छी बीज फसल से लगभग 400–800 कि.ग्रा. बीज प्रति है. प्राप्त किया जा सकता है।

बीज मानक		मानक स्तर	
		आधार बीज	प्रमाणित बीज
शुद्ध बीज (न्यूनतम)		98 प्रतिशत	98 प्रतिशत
निष्क्रय पदार्थ (अधिकतम)		2 प्रतिशत	2 प्रतिशत
अन्य फसलों के बीज (अधिकतम)		5 प्रति किलो	10 प्रति किलो
खर पतवार के बीज (अधिकतम)		5 प्रति किलो	10 प्रति किलो
अंकुरण क्षमता (न्यूनतम)		70 प्रतिशत	70 प्रतिशत
नमी (अधिकतम)	सामान्य पैकिंग नमी अवरोधी पैकिंग	8 प्रतिशत	6 प्रतिशत
		8 प्रतिशत	6 प्रतिशत

प्रमुख कीट, रोग एवं उनके नियंत्रण :–

प्याज का थ्रिप :– ये कीड़े छोटे और पीले रंग के होते हैं, जो पत्तियों का रस चूसते हैं, पत्तियों पर हल्के हरे रंग के लम्बे–लम्बे दाग दिखाई देते हैं जो बाद में सफेद हो जाते हैं। इनके नियंत्रण हेतु डाइमेथेएट 1.0 मि.ली. या साइपरमेथिन 0.5 मि.ली. प्रति ली. पानी में घोलकर 10–15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें। घोल में 0. 1 प्रतिशत ट्राइट्रोन या सैंडोविट या टीपोल या एप्सा–80 चिपचिपा पदार्थ अवश्य मिलाएं।

शीर्ष छेदक (हेलिओथिस आर्मिजेरा) :– इस कीट का लार्वा पत्तियों को काटकर फसल को हानि पहुंचाता है। यह कीट प्याज की बीज वाली फसल में ज्यादा क्षति पहुँचता है। इनके नियंत्रण हेतु मिथाइल डेमेटोन या सायपरमेथ्रिन 0.5–1.0 मि.ली. दवा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। घोल में 0.1 प्रतिशत ट्राइट्रोन या सैन्डोविट या एप्सा–80 नामक चिपचिपा पदार्थ अवश्य मिलायें।

बैगनी धब्बा (परपल ब्लाच) :– यह रोग अल्टरनेरिया पोरी नमक फफूँद से होता है। प्रभावित पत्तियों और तनों पर छोटे–छोटे गुलाबी रंग के सिकुड़े हुए धब्बे पड़ जाते हैं जो बाद में बैंगनी रंग के हो जाते हैं। प्याज की गांठे भण्डार गष्ह में सड़ने लगती है। पौधों की पत्तियां एक तरफ पीली तथा दूसरी तरफ हरी रहती है। इस रोग से बचाव के लिए क्लोरोथेलोनील या मैन्कोजेब (0.2 प्रतिशत) 2 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी में घोलकर 10 दिन के अन्तर पर छिड़काव करें। घोल में 0.1 प्रतिशत ट्रायट्रोन या सैंडोविट नामक चिपचिपा पदार्थ अवश्य मिलाएं।

मृदुरोमिल फफूँदी (डाउनी मिल्डयू)

इस रोग में पत्तियों तथा पुष्प दंडों की सतह पर बैंगनी रोयेंदार वृद्धि होती है जो बाद में हरा रंग लिए पीली हो जाी हैं तथा अन्त में पत्तियाँ एवं पुष्पदन्ड सूखकर गिर जाते हैं। इसकी रोकथाम हेतु मैंकोजेब या कापर आक्सीक्लोराईड का 0.14 से 2.0 प्रतिशत घोल (1.4–2. 0 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी) बनाकर फसल पर छिड़काव करें। आवश्यकता पड़ने पर 10–15 दिन के अंतराल पर पुनः छिड़काव करें। घोल में 0.1 प्रतिशत ट्राइट्रोन या सैन्डोविट चिपचिपा पदार्थ अवश्य मिलाएं।

''आज्ञा तो दीपक है और शिक्षा ज्योति, और सिखानेवाले की डांट जीवन का मार्ग है।''

नीतिवचन 6:23

आज की आवश्यकता : सब्जी बगीचा

मुनीष पालिया
एम.एस.सी. छात्र
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

डॉ0 एस. सरवनन
सह–प्रवक्ता
उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इला0

अच्छे स्वास्थ्य के लिए दैनिक आहार में संतुलित पोषण का होना अत्यंत महत्वपूर्ण है। फल एवं सब्जियों इसी संतुलन को बनाए रखने में अपना महत्वपूर्ण योगदान देते है क्योंकि ये विटामिन, खनिज लवण तथा कार्बोज के अच्छे स्त्रोत होते ळै। फिर भी ये जरूरी है कि इन फल एवं सब्जियों की नियमित उपलब्धता बनी रहें, इसके लिए घर के पिछवाड़े में पड़ी जमीन पर खेती करना बहुत ही लाभदायक उपाय हैं। पोशाहार विशेषज्ञों के अनुसार संतुलित भोजन के लिए एक वयस्क व्यक्ति को प्रतिदिन 85 ग्राम फल और 300 ग्राम साग–सब्जियों का सेवन करना चाहिए। परन्तु हमारे देश में साग–सब्जियों का वर्तमान उत्पादन स्तर प्रतिदिन, प्रतिव्यक्ति की खपत के हिसाब से मात्र 120 ग्राम है।

सब्जी बगीचा :–

- उपलब्ध स्वच्छ जल के साथ रसोईघर एवं स्नानघर से निकले पानी का उपयागे कर घर के पिछवाड़े में उपयोगी साग–सब्जी अगाने की योजना बना सकते है।
- एकतित्र अनुपयोगी जल का निष्पादन हो सकेगा और उससे होने वाले प्रदूषण से भी मुक्ति मिल जाएगी।
- सीमित क्षेत्र में साग–सब्जी उगाने से घरेलू आवश्यकता की पूर्ति भी हो सकेगी।
- सब्जी उत्पादन में रासायनिक पदार्थो का उपयोग करने की जरूरत भी नही होगी।

अतः यह एक सुरक्षित पद्धति है तथा उत्पादित साग–सब्जी कीटनाशक दवाईयों से भी मुक्त होगी।

सब्जी बगीचा के लिए स्थल :– सब्जी बगीचा के लिए स्थल घर का पिछवाड़ा ही होता है जिसे हम लोग बाड़ी भी कहते है। सुविधाजनक स्थान होता है क्योंकि परिवार के सदस्य खाली समय में साग–सब्जियों पर ध्यान दे सकते है तथा रसोईघर व स्नानघर से निकले पानी आसानी से सब्जी की क्यारी की ओर घुमाया जा सकता है।

सब्जी बगीचा का आकार भूमि का उपलब्धता और व्यक्तियों की संख्या पर निर्भर करता है। चार या पाँच व्यक्ति वचाले औसत परिवार के लिए 1/20 एकड़ जमीन पर की गई सब्जी की खेती पर्याप्त हो कसती है।

पौधा लगाने के लिए खेत तैयार करना :– सर्वप्रथम 30–40 सेमी की गहराई तक कदाली या हल की सहायता से जुलाई करें। खेत से पत्थर, झाड़ियों एवं बेकार के खर–पतवार को हँटा दे। खेत में अच्छे ढंग से निम्ति 100 कि0ग्रा0 कृमि खाद चारों ओर फैला दें। आवश्यकता के अनुसार 45 सेमी या 60 सेमी की दूरी पर भेड़ या क्योरी बनाएँ।

सब्जी बीज की बुआई और पौध रोपण :– सीधे बुआई की जाने वाली सब्जी जैसे–मिश्री, पालक एवं लोबिया आदि की बुआई भेड़ या क्यारी बनाकर की जा सकती है। दो पौधे 30 सेममी की दूरी पर लगाई जानी चाहिए। प्याज, पुदीना एवं धनिया को खेत के मेड़ पर उगाया जा सकता है। प्रतिरोपित फसल, जैसे–टमाटर, बैंगन और मिर्ची आति को एक महीना पूर्व में नर्सरी बेड़ या टूटे मटके में उगाया जा सकता है। बुआई के बाद मिट्टी से ढककर उसके ऊपर 2 सबजे बगीचा का

मुख्य उद्देश्य अधिकतम लाभ प्राप्त करना है तथा वर्ष भर घरेलू साग–सब्जी की आवश्यकता की पूर्ति करना है। बगीचा के एक छोर पर बारहमासी पौधों को उगाया जाना चाहिए जिससे इनकी छाया अन्य फसलों पर न पड़े तथा अन्य साग–सब्जी फसलों को पोश दे सकें। बगीचा के चारो ओर तथा आने–जाने के रास्ते का उपयोग विभिन्न अल्पावधि हरी साग–सब्जी जैसे– धनिया, पालन, मेथी, पुदीना आदि उगाने के लिए किया जा सकता है। 50 ग्राम नीम के फली का पाउडर बनाकर छिड़काव किया जाता है ताकि इसे चीटियों से बचाया जा सके। टमाटर, गोभी, बैंगन, मिर्ची के लिए 25–30 दिनों की बुआई के बाद तथा प्याज के लिए 40–45 दिनों के बाद पौधे को नर्सरी से निकाल दिया जाता है। टमाटर, बैंगन और मिर्ची को 30–45 सेमी की दूरी पर मेड़ या उससे सटाकर रोपाई की जाती है। प्याज के लिए मेड़ के दोनों ओर रोपाई की जाती है। रोपण के बाद पौधो की सिंचाई की जाती है।

प्रारंभिक अवस्था मे ंइस प्रतिरोपण को तीन–चार दिन बाद पानी दिया जाए तथा बाद में 6–7 दिनों के बाद पानी दिया जाएं सब्जी बगीचा या मुख्य उद्देश्य अधिकतम लाभ प्राप्त करना है तथा वर्ष भर घरेलू साग–सब्जी की आवश्यकता की पूर्ति करना है। बगीचा के एक छोर पर बारहमासी पौधो को उगाया जाना चाहिए जिससे इनकी छाया अन्य फसलों पर न पड़े तथा अन्य साग–सब्जी फसलों की पोषण दे सके। बगीचा के चारों ओर तथ आने–जाने के रास्त का उपयोग विभिन्न अल्पावधि हरी साग–सब्जी जैसे– धनिया, पालक, मेथी, पुदीना आदि उगाने के लिए किया जा सकता है।

फसल चक्र :–

वर्षा, शरद और ग्रीष्म की फसलें तालिका में बतलाए अनुसार लेना चाहिए।

वर्ष भर उगाने के लिए फसल चक्र					
खरीफ	**रबी**	**जायद**	**खरीफ**	**रबी**	**जायद**
पालक	मिर्च	ककड़ी	बैंगन	मूली	भिण्डी
तरोई	लहसून	छप्पन कटू	लोबिया	आलू	कद्दू
टमाटर	मेथी	तरबूज	मूली	प्याज	धनिया
टिण्डा	मटर	टमाटर	प्याज	पालक	करेला
भिण्डी	पत्तागोभी	करेला	भिण्डी	मूली	तरोई
लौकी	आलू	खरबूज	धनिया	फूलगोभी	लौकी
फूलगोभी	धनिया	प्याज	पुदीना	पुदीना	पुदीना
मिर्च	बाकला	टिण्डा	केला	केला	केला
ग्वार	बैंगन	बैंगन	नींबू	नींबू	नींबू
मिर्च	गाजर	पालक	पपीता	पपीता	पपीता

बरहमासी खेत :– स्हजन की फली, केला, पपीता, कढ़ी पता उपरोक्त फसल व्यवस्था से यह पता करता है कि वर्षभर बिना अंतराल के प्रत्येक खेत में कोई न कोई फसल अवश्य उगाई जा सकती है। साथी ही कुछ क्यारियों में एकसाथ दो फसले (एक लम्बी अवधि वाली और दूसरी कम अवधि वाली) भी उगाई जा सकती है।

सब्जी बगीचा निर्माण के आर्थिक लाभ :– व्यक्ति पहले अपने परिवार का पोषण करता उसके बाद बेचता है। आवश्यकता से अधिक होने पर उत्पाद का बाजार में बेच देता है या उसके बदले दूसरी सामग्री प्राप्त कर लेता है। कुछ मामले में घरेलू बगीचा आय सृजन का प्राथमिक उद्देश्य बन सकता है। अन्य मामले में, यह आय सष्जन उद्देश्य के बजाय पारिवारिक सदस्यों के पोषण लक्ष्य जो पूरी करने में मदद करता है। इस तरह, यह आय सृजन और पोषाहार का दोहरा लाभ प्रदान करता है।

विश्वविद्यालय प्रकाशन प्रभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय
इलाहाबाद - २११००७
Phone- 0532-2684278

हमार गाँव
सदस्यता फार्म

1. नाम :– ....
2. पद :– ....
3. विभाग :– ....
4. पता :– कार्यालय..
....
निवास..
5. दूरभाष :– लैण्डलाइन– कार्यालय..................................निवास..................................
मोबाइल..
6. वार्षिक सदस्यता शुल्क का भुगतान :– डिमाण्ड ड्राफ्ट/चेक नं0..................................दिनांक..................................
बैंक ....

धनराशि :– रुपये एक सौ मात्र (रु0 200/–)
(उचित स्थान पर सही का चिन्ह लगायें। नियम–8 देखें) रुपये दो सौ मात्र (रु0 350/–)
"शियाट्स पब्लिकेशन एकाउन्ट" के पक्ष में देय।

7. वार्षिक सदस्यता अवधि वर्ष......................के लिए ।

हस्ताक्षर

दिनांक....................

नाम..

यहां से काटिये — यहां से काटिये

नियम एवं शर्तें

लेखक ध्यान दें –

1. हमार गाँव त्रैमासिक पत्रिका के लिए लेख केवल सरल हिन्दी भाषा में ही स्वीकार्य किये जायेंगे।
2. लेख पेपर में केवल एक तरफ डबल स्पेस में टाइप अथवा स्पष्ट हस्तलिखित ही मान्य होंगे।
3. लेख कृषकों, उनके परिवारों के हित में कृषि विज्ञान एवं गृह विज्ञान पर आधारित होने चाहिए।
4. लेख चार पेज (साईज 7.25 x 9.50) से अधिक न हो।
5. हमार गाँव के सदस्यों के ही लेख पत्रिका में प्रकाशित किये जाते हैं।
6. सदस्यता फार्म विश्वविद्यालय प्रकाशन प्रभाग में उपलब्ध हैं।
7. वार्षिक सदस्यता हेतु शुल्क रुपये दो सौ (रु0 200/–) मात्र एवं संस्थान के लिए सदस्यता शुल्क रुपये तीन सौ पचास (रु0 350/–) मात्र निर्धारित है। (रू0 100/– डाकखर्च अतिरिक्त)।
8. हमार गाँव की सदस्यता अवधि प्रत्येक वर्ष जनवरी से दिसम्बर अन्त तक होगी।
9. विद्यार्थियों द्वारा प्रेषित लेख उनके सम्बन्धित विभाग के विभागाध्यक्ष से अग्रसारित होना आवश्यक है।
10. लेख की सम्पूर्ण जिम्मेदारी लेखक की होगी। लेख के लिए विश्वविद्यालय प्रकाशन प्रभाग, शियाट्स, इलाहाबाद किसी प्रकार उत्तरदायी नहीं होगा।

* *शैक्षणिक संस्थानों जैसे संगठन/विश्वविद्यालय/महाविद्यालयों/स्कूलों पर लागू।*

यहां से काटिये